ग्रामीण विकास
को समर्पित

कुरुक्षेत्र

वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

वर्ष 53 अंक : 8 जून 2007 मूल्य : 10 रुपये

पिघलते ग्लेशियर घटता जल स्तर

लोक प्रशासन

(हिन्दी माध्यम)

By **Atul Lohiya**

(A person who believes in scientific approach and hard work)

UGC-NET

QUALIFIED IN TWO SUBJECTS

(HISTORY & PUB. ADMINISTRATION)

कुल अंक : 332
(प्रथम प्रश्न पत्र: 188)
(द्वितीय प्रश्न पत्र: 144)

Navin Sharma
UPSC-06

Pramod K. Dubey
Topper, UPPCS-04

Prakash Chandra
SDM Uttaranchal-02

Arvind Kumar
Topper, UPSC-03

A.P.S. Yadav
Topper, UPSC-04

Virendra Kumar
Essay+Interview (A.C.)

Lokesh Lilhare
Topper, UPSC-05

Vineet Jain
Topper, UPSC-05

रीतेश चौहान-लोक प्रशासन (यू.पी.एस.सी.-05) में हमारे संस्थान के अधिकतम अंक प्राप्तकर्ता-334 (प्रथम प्रश्न पत्र-178, द्वितीय प्रश्न पत्र-156)

केवल हम कराते हैं लोक प्रशासन का सम्पूर्ण एवं समग्र अध्ययन;

- ★ ***UPSC*** के साथ ***UP, MP, Raj., Bihar, Uttaranchal, Jharkhand Chhattisgarh, Haryana, Himachal PCS*** की भी तैयारी;
- ★ बेहतर समझ, बेहतर नोट्स एवं बेहतर प्रश्न अभ्यास तथा लेखन-शैली के विकास के समन्वित दृष्टिकोण पर आधारित मार्गदर्शन, अध्यापन की शैली-विशिष्ट व वैज्ञानिक।
- ★ लोक प्रशासन से संबंधित समसामयिक, किन्तु आवश्यक एवं उपयुक्त जानकारियों का समावेश।
- ★ अनावश्यक तथ्यों के संकलन द्वारा लोक प्रशासन को बोझिल बनाने के स्थान पर एक सरल तथा सुरुचिपूर्ण विषय के रूप में समझाने पर विशेष बल।

Other Course :
•**Improve your Memory Power** (IAS/PCS) by: **Jitendra Tiwari,** National Memory Record Holder (Limca Book of Records)
•**Writing Skill & Essay** (IAS/PCS) by: **Neelesh Jain** (President Awardee Expert)

JOIN FOUNDATION COURSE
MPPSC (Mains) के लिए विशेष बैच

New Batch (Delhi)
1st & 15th June, 2007
Admission Open from 21st May

लोक प्रशासन

Mains के साथ-साथ
Pre. के लिये भी बेहतर विकल्प

'अतुल लोहिया'

शिक्षक, मार्गदर्शक और मित्र भी

पत्राचार पाठ्यक्रम भी उपलब्ध

(पूर्णतः संशोधित, परिमार्जित एवं परिवर्धित कम्प्यूटराइज्ड नोट्स)

MAINS - 3000/-
MAINS + PRE. - 4000/-
डाक खर्च - 200/- अतिरिक्त
Send DD/MO in favour of Atul Lohiya

New Batch (Allahabad)
2nd Week of June, 2007
Admission Open from 21st May

"PRABHA"

AN INSTITUTE OF PUBLIC ADMINISTRATION

105, VIRAT BHAWAN (MTNL BLDG.), NEAR BATRA CINEMA, MUKHERJEE NAGAR, DELHI-110009
Phone : 27653498, 27655134, 32544250. Cell.: 9810651005 • e-mail: atulprabha@gmail.com
Branch : 305/250, COLONELGANJ, NEAR COLONELGANJ POLICE STATION, ALLAHABAD.

KH-06/07/02

वर्ष : 53 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 48
ज्येष्ठ–आषाढ़ 1929, जून 2007

प्रभारी सम्पादक
कैलाश चन्द मीना
संपादकीय पत्र–व्यवहार
संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : dpd@sb.nic.in dpd@hub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
एन.सी. मजुमदार

व्यापार प्रबंधक
जगदीश प्रसाद
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

आवरण एवं सज्जा
संजीव सिंह और रजनी दवे

मूल्य एक प्रति : 10 रुपये
वार्षिक शुल्क : 100 रुपये
द्विवार्षिक : 180 रुपये
त्रिवार्षिक : 250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)
पड़ोसी देशों में : 550 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में : 750 रुपये (वार्षिक)

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

कुरुक्षेत्र

इस अंक में

- **दस्तक देता जल संकट** — आशुतोष शुक्ल — 5
- **प्यासी धरती – प्यासे लोग** — मयंक श्रीवास्तव — 10
- **खेती में पानी का बढ़ता अभाव और नई सिंचाई प्रणालियों का विकास** — ईशानदेव — 15
- **ताकि यह हरियाली बनी रहे.....** — प्रांजल धर — 18
- **जल को बचाना वर्तमान सदी की आवश्यकता** — डी.डी. ओझा — 24
- **प्राकृतिक संसाधन और उनका संरक्षण** — प्रियंका द्विवेदी — 29
- **मधुमक्खी पालन – आय का स्रोत** — सी.जे. जुनेजा — 33
- **ग्राम न्यायालयः मुकदमे निपटाने के सफर में 'मील के पत्थर'** — अखिलेश आर्येन्दु — 37
- **जैव–विविधता और उसका संरक्षण** — अरविन्द कुमार शुक्ल — 39
- **ओजोन परतः आज की चिंता** — – — 43
- **गुणों की खान है टमाटर** — जगनारायण — 45
- **इंदिरा आवास योजना से सच हुआ सपना** — – — 47

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय

सम्पूर्ण ब्रह्मांड में पृथ्वी ही एकमात्र ऐसा ग्रह है जहां पर जीवन है। पृथ्वी पर लगभग दस लाख प्रकार के जीवधारी रहते हैं। इनमें मनुष्य का स्थान सर्वोपरि है। मनुष्य ने सारे सौरमंडल को खंगाल डाला, ग्रहों–उपग्रहों को जांचा–परखा, चांद पर उतरा, मंगल ग्रह पर अनेक यान भेजे पर कहीं भी उसे जल की छोटी–सी धारा नजर नहीं आई। इसका मतलब यह कि सिर्फ पृथ्वी पर ही जल है। धरती पर अनंतकाल से जलचक्र चल रहा है जो करोड़ों जीवों की रक्षा कर रहा है। जीवन का समग्र रूप पृथ्वी की एक पतली परत में ही सीमित है जिसे जीवमंडल कहा जाता है। इस जीवमंडल में पेड़–पौधे और पशु–पक्षियों के कारण ही हमारे जीवन का अस्तित्व है।

ओजोन परत में प्रतिदिन क्षरण के कारण तापमान में वृद्धि हो रही है जिसे ग्लोबल वार्मिंग कहा जाता है। बढ़ते ताप के कारण प्रकृति में बदलाव आ रहा है। कहीं भारी वर्षा, कहीं सूखा, कहीं बाढ़ तो कहीं लू और कहीं ठंड। एक तरफ ग्लेशियर पिघल रहे हैं तो दूसरी ओर समुद्र का जलस्तर बढ़ रहा है। इस प्राकृतिक परिवर्तन के कारण जमीन का जलस्तर भी घटता जा रहा है। हमारे लिए हिमालय के ग्लेशियर मीठे जल के बड़े स्रोत रहे हैं। अब हम इन्हें पिघलने से कैसे रोके, इस पर सबको गहन मंथन करने की आवश्यकता है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। साठ से सत्तर प्रतिशत लोग गांवों में रहते हैं जिनका मुख्य व्यवसाय खेती है। हमारी कृषि मुख्यतया वर्षा पर आधारित है। भारत में सर्वाधिक पानी की खपत खेती में ही होती है। अगर जलवायु में किसी भी प्रकार का परिवर्तन होता है तो सामान्य वर्षा की संभावना खत्म हो जाती है और जिसका सीधा असर यहां की कृषि व्यवस्था पर पड़ता है। अब पानी की कमी के कारण लोगों का कृषि व्यवसाय चौपट होता जा रहा है। खेती में लागत बढ़ रही है। गांवों के लोग काम–धन्धे की तलाश में शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। आज गांवों में खेती के लिए ही नहीं शहरों में भी पीने के पानी की कमी महसूस की जा रही है।

एक तरफ सिंचाई के लिए भूजल का अत्यधिक दोहन हो रहा है तो दूसरी तरफ अशुद्ध पेयजल के कारण तरह–तरह की बीमारियां फैल रही हैं। पानी चाहे कहीं से भी और कैसे भी मिले हम इसका अंधाधुंध प्रयोग कर रहे हैं। इस भूमिगत जल के बेहिचक दोहन से भारी जल संकट पैदा हो गया है जिसका प्रयोग गांवों से लेकर शहरों की तरफ निरंतर बढ़ रहा है। क्या हम इस बारे में सोचते हैं कि भविष्य के लिए कितना पानी उपलब्ध है? पानी के बिना आने वाली पीढ़ियां क्या करेंगी?

जब हम जल संरक्षण की बात करते हैं तो निष्कर्ष यही निकलता है कि देशवासियों में जागरूकता की कमी है। अगर हमें आज अपना और कल हमारे बच्चों का भविष्य संवारना है तो जल की बर्बादी को रोकना होगा और प्राकृतिक सम्पदा की हर कीमत पर रखवाली करनी होगी। इस काम के लिए सरकार के साथ–साथ प्रत्येक व्यक्ति को आगे आना होगा चाहे वह गांव में रहता हो या शहर में।

हमने इस अंक से काफी अंतराल के बाद पाठकों की बेदह मांग पर सम्पादकीय लिखना शुरू किया है। आशा है, हमारे प्रिय पाठकगण कल की सबसे बड़ी चुनौती जल संकट को कम करने में स्वयं तथा औरों का सहयोग लेकर इससे उबारने में सहयोग करेंगे। आपकी प्रतिक्रियाओं का हमें इंतजार रहेगा.....

मत–सम्मत

कुरुक्षेत्र का अप्रैल 2007 अंक, जो बजट विशेषांक के रूप में पाठकों के सामने प्रस्तुत है एक सराहनीय प्रयास कहा जा सकता है। इसमें ग्राम बजट के अलावा रेल बजट पर भी कई लेख शामिल किये गये हैं। इसके कवर डिजाइन, साज–सज्जा, रंग–रूप व गेटअप में अभी आकर्षक बदलाव आया है। अब लगभग सभी लेख रुचिकर एवं ज्ञानवर्द्धक है खास कर आम बजट 2007–08 एक नजर में–पुष्पेश पंत, यह बजट और आम किसान–दुष्यंत सिंह का लेख–रेल बजट 2007–08, सुहाना हुआ रेल का सफर एवं रश्मि निषाद और शिल्पी का सबको मिला फायदा रेल बजट से एवं रेल बजट 2007–08 मुख्य विशेषताएं, प्रमुख रूप से सराहनीय हैं।

अगर पत्रिका की विषय वस्तु, लेखों के चयन, सम्पादन व प्रकाशन पर पूर्ववत ध्यान दिया जाए तो इस अंक से बढ़ी हुई दर अथवा वार्षिक सदस्यता शुल्क को पाठकगण निःसंकोच वहन करने में गौरव की बात मानेंगे। हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि आने वाले दिनों में भी पत्रिका की गुणवत्ता, उपयोगिता, प्रचार–प्रसार में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाऐगी जिससे समस्त पाठकगण लाभान्वित होते रहेंगे। हालांकि विषय–वस्तु का सार–संक्षेप आवश्यक है जो सम्पादकीय में सहज ही उपलब्ध कराया जा सकता है। सम्पादकीय के अभाव में एक सूनापन–सा लगता है, अतः हम इस कमी को दूर करने के लिए आपसे निवेदन करने में भी नहीं हिचकते हैं।

राकेश कुमार, बिहार

बजट 2007–08 का अप्रैल 2007 का अंक पढ़ा जो बहुत ही रोचक लगा। इसमें बजट के विभिन्न पहलुओं–आम बजट, रेल बजट तथा सम्बंधित क्षेत्रों पर काफी प्रकाश डाला गया है। वैसे तो पत्रिका प्रभावशाली है जिसकी व्याख्या करना शब्दों में कठिन है। श्री पुष्पेश पंत ने जिस तरह से "आम बजट एक नजर" में लिखा है अत्यन्त प्रशंसनीय है। किसानों पर इस बजट में किये गये खर्च पर आधारित लेख भी सराहनीय है। कुरुक्षेत्र पत्रिका का हर अंक हमारे लिए अमृत समान है। इसे मैं नियमित रूप से पढ़ता आ रहा हूं।

मयंक श्रीवास्तव, इलाहाबाद

कुरूक्षेत्र का अप्रैल अंक 2007 पढ़कर सरल शब्दों में बजट समझने में मदद मिली। बजट का निर्माण वर्तमान और भविष्य दोनों को संवारने के लिए होता है। जिस देश का प्रधानमंत्री एवं वित्तमंत्री ही अर्थ विशेषज्ञ हैं, वहां का बजट खास होने की उम्मीद सभी को होती है। 2007–08 का बजट कई क्षेत्रों में नई उम्मीदें लाया है लेकिन कृषकों के लिए अन्य महत्वपूर्ण योजनाओं की उम्मीद थी। भारत की 70 प्रतिशत आबादी ग्रामीण है। किसान भारत की लाइफलाइन हैं। अगर सरकार इनकी तरफ विशेष ध्यान नहीं देगी तो देश को गंभीर चुनौती का सामना करना पड़ेगा। लालू यादव के रेल बजट ने रेलवे का भविष्य सुनहरा बना दिया है। बैंकिंग प्रणाली समता मूलक उपाय–विजय प्रकाश श्रीवास्तव का लेख पढ़कर कहा जा सकता है कि बैंक अर्थ व्यवस्था के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। आम बजट कुछ रोचक तथ्य–राकेश शर्मा 'निशीथ' का लेख ज्ञानवर्द्धक था।

अमृता पांडेय, दिल्ली

अप्रैल 2007 का अंक वार्षिक बजट के रूप में है। जिसमें सरकार की योजनाओं को विभिन्न समीक्षकों द्वारा विश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। जिसमें हरवीर सिंह जी का लेख 'ऊंची विकास दर के बीच जारी रहा भारत निर्माण' सराहनीय है। सरकार द्वारा "रोजगार गारण्टी योजना" को 200 जिलों से बढ़ाकर 300 जिलों में लागू करने को सराहनीय कदम माना है, वहीं वित्तमंत्री को उद्धृत करते हुए उच्च विकास दर को बनाए रखने के लिए कृषि की महत्ता को भी दर्शाया है। दुष्यंत सिंह जी ने जहां एक तरफ रोजगार गारंटी योजना को ग्रामीण ऋण ग्रस्तता और गरीबी निवारण हेतु सार्थक कदम माना है वहीं दूसरी ओर सरकार द्वारा संस्थागत ऋण और क्रेडिट कार्ड जैसी आकर्षक योजनाओं को छोटे मोटे धारकों हेतु निरर्थक मानते हैं। उन्होंने बैंकों द्वारा छोटे किसानों को ऋण न दिए जाने को महाजनी दुश्चक्र का कारण माना है। कृषि विकास एवं ग्रामीण संवृद्धि में सार्थक सहयोगी के रूप में सूर्यभान सिंह जी ने सहकारिता के महत्व को रेखांकित करते

हुए सहकारिता आंदोलन के सामाजिक उद्देश्य को उद्धृत किया है।

मनोज दूबे, उत्तर प्रदेश

ग्रामीण विकास को समर्पित पत्रिका कुरुक्षेत्र का अप्रैल 2007 अंक जो कि बजट 2007–08 पर केंद्रित था, अत्यंत ज्ञानवर्धक लगा। सर्वगुण संपन्न इस अंक में प्रस्तुत लेख 'आम बजट 2007–08 एक नजर में' 'केन्द्रीय बजट एवं ग्रामीण विकास एक विश्लेषण' 'भारत में सहकारिता और आर्थिक विकास' 'सूक्ष्म वित्त–समय की मांग' और आम बजट–कुछ रोचक तथ्य इत्यादि लेख रोचक व ज्ञानवर्धक तथ्यों से परिपूर्ण थे। अतः इस अंक के लिए अद्भुत, अलौकिक, आश्चर्यजनक, असाधारण तथा अद्वितीय जैसे शब्दों का प्रयोग करने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि आगे भी यह पत्रिका इस प्रकार के रोचक अंकों को हमारे समक्ष प्रस्तुत कर सफलता के ऊंचे झण्डे गाड़ती रहेगी।

रुद्र प्रताप सिंह, उत्तर प्रदेश

बुक स्टॉल पर रखे कुरुक्षेत्र अंक पर मेरी नज़र पड़ी। मैंने खरीदा एवं स्वाध्याय किया। कुरुक्षेत्र अंक काफी अच्छा लगा। इसमें कृषि के साथ–साथ अन्य विषयों पर लेख दिये जाते हैं और जिससे ज्ञानवर्द्धन होता है और विषयवस्तु की अच्छी जानकारी प्राप्त होती है। मैं बराबर बुक स्टॉल से हर महीने अंक मंगवा लिया करता हूं। इस वर्ष 2007 का अप्रैल अंक मुझे और भी बेहद पसंद आया जिसमें कृषि से जुड़े अनेक लेखों में किसानों के लिए जानकारी दी गई है। शिक्षा, ग्रामीण विकास एवं रोजगार संबंधी विषयों पर विद्वान लेखकों द्वारा प्रस्तुत लेख एक सराहनीय कदम है। मैं इस पत्रिका के भविष्य की सुन्दर कल्पना करता हूं।

मैं आपसे अनुरोध करूंगा कि कुरुक्षेत्र पत्रिका में लेखकों का पता छापा कीजिए तो उससे यह होगा कि भ्रांतियां होने पर पाठक अपनी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

वैदेही शरण सिंह, बिहार

मैं इग्नू से ग्रामीण विकास में स्नातकोत्तर कर रहा हूं। आपके द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'कुरुक्षेत्र' को मैं पिछले तीन वर्षों से पढ़ता आ रहा हूं। आपकी इस अमूल्य कृति के लिए मैं आपका ह्रदय से आभार व्यक्त करता हूं। मैंने अप्रैल 2007 का अंक पढ़ा।

'केन्द्रीय बजट एवं ग्रामीण विकास एक विश्लेषण' इसके सभी बिन्दुओं पर विस्तार से जानकारी प्राप्त हुई, जो कि सराहनीय है। बीच–बीच में जो जानकारी दी गई वह और भी रोचक है, जैसे – पलायन पर रोक साहूकार से छुटकारा रोजगार गारंटी योजना बनी सहारा, इस तरह की जानकारी बहुत लाभदायक है।

अजय कुमार शर्मा, झारखंड

गांवों को समर्पित 'कुरुक्षेत्र' का अप्रैल अंक पढ़ा। सचमुच आज सहकारिता एक मज़बूत माध्यम बन सकता है जिसके जरिए गांवों का विकास किया जा सकता है। हमारा भारत किसानों, फसलों और खेतों–खलिहानों का देश है। साहित्य में बराबर दखल रखने वाले प्रांजल धर का लेख बहुत रोचक है। 'ताकि जीवंत हो उठे सहकारी आंदोलन' नामक उनका लेख विषय को समेटकर सहकारिता के सभी पहलुओं पर बखूबी रोशनी डालता है। जहां एक तरफ प्रांजल धर ने वेनेजुएला जैसे लौटिन अमरीकी देश से प्रेरणा लेने की बात की है, वहीं दूसरी और भारत की समस्याओं और उनके समाधानों पर भी बाकायदा विचारमंथन किया है। इसके अलावा पांरपरिक खेती, आम बजट और नाबार्ड की कोशिशों पर दिए गए लेख सुन्दर लगे। आज बजट को आम किसानों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। इससे संबंधित लेख भी पसंद आए।

साफिया खातून, मध्य प्रदेश

आम बजट 2007–08 और इस वर्ष के रेल बजट पर केन्द्रित 'कुरुक्षेत्र' का अप्रैल अंक पढ़ा। पहला लेख इस बात को सिद्ध करता है कि सिर्फ आर्थिक प्रगति की दर बढ़ने से ही गांवों का विकास नहीं हो जायेगा। आज रोजगार गारंटी मिशन, दलहन व तिलहन मिशन और फसल बीमा योजना जैसे कई प्रयासों की जरूरत है ताकि गांव में खेतों–खलिहानों के स्वामी और प्रेमचंद के उपन्यासों के पात्रों की जिन्दगी भी सुधर सके। विदर्भ में किसानों की आत्महत्या को बीते अभी ज्यादा दिन नहीं हुए हैं, सिंगूर व नंदीग्राम के किसानों पर वक्त की पड़ी मार अपने ही जवानों के लिए लालायित है और पूरा पूर्वोत्तर सहकारिता के क्षेत्र में इच्छा शक्ति की रचनात्मक गुहार लगा रहा है। सहकारिता पर केन्द्रित प्रांजल धर का लेख 'ताकि जीवंत हो उठे सरकारी आन्दोलन' इस लिहाज से बेदह महत्वपूर्ण है कि उसमें भारत की आत्मा कहे जाने वाले गांवों के विकास की उत्कृट अभिलाषा दिखती है। लेकिन इस लेख की इससे भी बड़ी अच्छाई यह है कि इसमें पूर्वोत्तर के राज्यों के चहुंमुखी विकास का खाका खींचा गया है।

प्रार्थना भुयां, असम

दस्तक देता जल संकट

आशुतोष शुक्ल

सौरमंडल में हमारी पृथ्वी ही एकमात्र ग्रह है जहां जीव–जन्तु, पशु–पक्षी, वनस्पति आदि के जीवन की अनुकूलता के लिए उचित वातावरण है; जल इस वातावरण का आधारभूत तत्व है। जीवों की सभी जैविक व रासायनिक क्रियाएं जल से ही संभव है। लेकिन औद्योगीकरण, शहरीकरण, बाजारीकरण के फलस्वरूप जल का दोहन इतना अधिक हुआ कि विश्व की अधिकांश आबादी जल जैसी मूलभूत आवश्यकता के अभाव में जिंदगी काटने को मजबूर है। पृथ्वी के दो–तिहाई भाग में जल उपस्थित है और इस सम्पूर्ण जल में 97 प्रतिशत भाग समुद्र अपने में समाए हुए है, 2 प्रतिशत भाग ऊंचे–ऊंचे हिमशिखरों पर जल के ठोस रूप बर्फ की शक्ल में विद्यमान है, केवल एक प्रतिशत जल का प्रयोग हम पीने के पानी, सिंचाई, औद्योगिक जरूरतों और रोजमर्रा की आवश्यकताओं के लिए करते हैं। बढ़ती जनसंख्या के साथ–साथ दैनिक आवश्यकताओं के दिनोदिन बढ़ते जाने के परिणामस्वरूप स्थिति यह है कि विश्व की 55 करोड़ से अधिक की आबादी जल संकट का सामना कर रही है। पृथ्वी पर जल, जल चक्र के माध्यम से प्राप्त होता है। सागरों और धरती से जल वाष्पीकरण द्वारा बादलों का रूप धारण करता है और समय आने पर वर्षा के रूप में पृथ्वी पर गिरता है। वर्षा के बाद कुछ जल या तो तालाबों, पोखरों, झीलों आदि में रुक जाता है लेकिन जल का एक बड़ा भाग नदियों, नालों से होता हुआ पुनः सागरों में मिल जाता है, जब किन्हीं कारणों से इस जल चक्र में बाधा पड़ी है तो कुछ स्थानों पर बाढ़ आती है और कहीं–कहीं सूखे के कारण जीव–जन्तु और वनस्पतियों का बड़ी मात्रा में क्षय होता है। मानवीय हस्तक्षेप के पहले प्रकृति की व्यवस्था कुछ ऐसी रही है कि वह वर्षा जल का संचयन, नियंत्रण और व्यय स्थापन स्वयं करती आई हैं। प्रकृति यह काम छोटे–बड़े जलाशय, पोखर, तालाब, झील, कुओं आदि के माध्यम से करती आई हैं। वर्षा का जल जब इनमें गिरता है तो धीरे–धीरे भू–जल का स्तर भी ऊपर आता है। लेकिन समय के साथ हमने इन प्राकृतिक स्रोतों को नकार दिया, कई तालाब, पोखर और झीलें सूख गई और जल की आवश्यकताओं के लिए हम ट्यूबवेल, हैंडपंप, नलकूप जैसे कृत्रिम तरीकों पर निर्भर हो गए। इससे हुआ यह कि एक तरफ तो प्राकृतिक स्रोतों के सूखने से भू–जल का स्तर गिरता गया। इसके विपरीत हमने नए–नए यंत्रों से जल निकालने की गति दिन–दूनी रात–चौगुनी कर दी। मतलब यह कि जल सिर्फ निकलता रहा, उसका संचयन बंद हो गया। यह तालाब, पोखर आदि सिंचाई के साधन के रूप में भी बड़ी भूमिका निभाते थे। भारत में 1950 के दशक में 5 लाख तालाब थे जिससे 36 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई होती थी। इन तालाबों का प्रमुख कार्य वर्षा जल का संचयन और भू–जल के स्तर में वृद्धि तो था ही सिंचाई, जीव–जन्तुओं को संरक्षण और बाढ़ से बचाव में भी यह बड़ी भूमिका निभाते थे। अब इनकी जगह कस्बों, खेल के मैदानों, ऊंची–ऊंची इमारतों और नए–नए भवनों ने ले ली है। जल–संकट की यह स्थिति सिर्फ भारत की ही नहीं है बल्कि यह समस्या अपनी प्रकृति में ही वैश्विक है। पूरे विश्व में न्यूनतम् 1000 क्यूबिक मीटर जल की उपलब्धता आवश्यक है, इससे कम मात्रा वाला क्षेत्र जल संकट ग्रस्त माना जाएगा। विश्व की तेजी से बढ़ती जनसंख्या के सापेक्ष जल संसाधन में बढ़ोत्तरी नहीं हो रही है। खासकर तीसरी दुनिया के देशों में जनघनत्व के लिहाज से संसाधन अत्यंत सीमित है। इन देशों के गांवों में आज भी महिलाओं को पानी लाने के लिए कई किलोमीटर का सफर तय करना पड़ता है, किसानों को जल की कमी से सूखे की मार झेलनी पड़ती है, स्वच्छ और साफ जल न मिल पाने के कारण बच्चे पैदा होते ही निर्जलीकरण के शिकार होकर दम तोड़ देते हैं। भारत में अभी जल संकट की स्थिति अपना विकराल रूप धारण नहीं कर सकी है क्योंकि प्रति व्यक्ति न्यूनतम जल उपलब्धता 1000 क्यूबिक मीटर के स्थान पर

भारत में 1900 क्यूबिक मीटर जल की उपलब्धता है। लेकिन भारत के सभी क्षेत्रों की यह स्थिति नहीं है। अधिकांश गांवों और महानगरों में जल की उपलब्धता मांग से कम है। मसलन, विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की राजधानी दिल्ली को प्रतिदिन 650 करोड़ गैलेन पानी की आवश्यकता है जिसके एवज में इसे मात्र 400 करोड़ गैलेन पानी से ही संतोष करना पड़ता है। देश की आर्थिक राजधानी मुंबई की भी यही दशा है। मुंबई को प्रतिदिन 530 करोड़ गैलेन पानी से ही काम चलाना पड़ता है जबकि उसकी आवश्यकता 750 करोड़ गैलेन प्रतिदिन है। अभी हाल ही में दुनिया भर के पच्चीस हजार वैज्ञानिकों के शोध पत्र के आधार पर बनाई गयी रिपोर्ट इंटर गवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज के आधार पर भारत की 2030 की तस्वीर को दिखाया गया है। इसके अनुसार यदि 2030 में 1 करोड़ 80 लाख आबादी का अनुमान लगाएं तो भारत में प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता 1000 क्यूबिक मीटर से भी कम हो जाएगी जिसे 1700 क्यूबिक मीटर तक रहना चाहिए। 1900 क्यूबिक मीटर से घटकर बनी इस स्थिति में कृषि का उत्पादन भी तीस प्रतिशत तक घटने का अनुमान लगाया गया है। भारत में हिमालय के ग्लेशियर मीठे जल के बड़े स्रोत रहे हैं, 2030 तक यह ग्लेशियर 5 से 10 लाख वर्ग किलोमीटर तक सिकुड़ जाएंगे। अगर हम वर्तमान समय की बात करे तो भारत में हर वर्ष 9,000 अरब घन मीटर जल प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त होता है। इसमें से 1500 अरब घन मीटर भाग नदियों–नालों से होते हुए सागरों में मिल जाता है। 700 अरब घन मीटर भाग धरातल में संचित हो जाता है, और इतना ही भाग जलवाष्प बनकर वातावरण में समाहित हो जाता है। बाकी बचा 1100 अरब घन मीटर में से 700 अरब घन मीटर जल प्रयोग में आता है। धरातल में संचित जल से भारत का 50 प्रतिशत से अधिक भाग सिंचित होता है। इसमें कृषि योग्य भूमि का 60 प्रतिशत भाग शामिल है। स्वाधीन भारत में सिंचाई योग्य भूमि में जबरदस्त बढ़ोत्तरी हुई। 1951 में 226 लाख हेक्टेयर भू–भाग की सिंचाई की जाती थी जो सन् 2000 तक बढ़कर 10 हजार करोड़ हेक्टेयर से अधिक हो गया। चूंकि भू–जल से ही अधिकांश भाग की सिंचाई होती थी इसलिए भू–जल का स्तर बहुत ही कम हो गया। भू–जल की मात्रा जानने के लिए ही भू–जल बोर्ड ने 28 राज्यों और 6 केंद्र शासित प्रदेशों की 5723 इकाइयों का भू–भाग का आकलन किया इसमें 4078 यानी 71 प्रतिशत इकाइयों को भू–जल के मामले में सुरक्षित पाया गया, 10 प्रतिशत इकाइयां चिंता के कगार पर थीं तो 4 प्रतिशत इकाइयों की हालत सबसे बुरी थी। वैसे भी भारत में भू–जल संचयन की क्षमता 214 अरब घन मीटर है इसमें 160 अरब घन मीटर ही दोबारा संचित किया जा सका है। अतः कुछ इकाइयों के चिंताजनक स्तर का यह एक बड़ा कारण है कि समय पर भू–जल संचयन का काम उतनी तेजी से नहीं हो सका जिसकी अपेक्षा थी। भारत के कई राज्यों में आज भू–जल का स्तर 20 से 30 फुट नीचे चला गया है। हालांकि सरकार ने जल स्तर बढ़ाने का प्रयास किया है लेकिन जनता को भी आने वाले जल संकट के प्रति जागरूक होने की आवश्यकता है। आज की भाग–दौड़ की जिंदगी में जनता जल के संचयन और संरक्षण से कोई वास्ता नहीं रखती है। वहीं कुछ वर्ष पहले देश का हर व्यक्ति इन तालाबों, पोखरों, कुओं को अपने जीवन का अंग समझता था। आज तालाब और पोखर आदि में गाद भर गयी है, सूख भी गए हैं लेकिन खतरों से अंजान व्यक्तियों को अपना कर्तव्य बोध नहीं हो रहा है। इसके दुष्परिणाम भी सामने है। आज नलकूपों, हैंडपंपों, ट्यूबवेलों की बोरिंग चाहे जितनी गहराई पर कराई जाए वह बहुत जल्द पानी फेंकना बंद कर देते हैं। इससे एक तरफ कृषि का उत्पादन घटता है तो वहीं दूसरी ओर किसान आर्थिक रूप से कमजोर भी हो जाते हैं।

पिघलते ग्लेशियर घटता जल स्तर

भारत सरकार ने जल संकट से निपटने के लिए काफी जोर–शोर से प्रयास किया है। जल के सर्वेक्षण, आकलन, अन्वेषण, प्रबंधन, प्रशिक्षण और तकनीकी हस्तांतरण के लिए केन्द्रीय भू–जल बोर्ड का गठन 1970 में किया। यह बोर्ड देश में 19,569 कुओं के नेटवर्क की निगरानी कर रहा है। इन कुओं के माध्यम से एक वर्ष में चार बार जल स्तर और एक बार जल की गुणवत्ता मापी जाती है। इन कुओं को आधुनिक तकनीक के विभिन्न जल स्तर संकेतक से सुसज्जित किया गया है, ताकि जल सतह में होने वाले नियमित परिवर्तन का आकड़ा मिल

सके। जिन क्षेत्रों में भू–जल प्रदूषण तथा समुद्री जल मिश्रण की समस्या है वहां भी समस्या के आकलन तथा रोकथाम के उपाय सुझाने का काम भी केन्द्रीय भू–जल बोर्ड करता है। चूंकि भारत एक विशाल देश है इसलिए यहीं स्थान–स्थान पर विभिन्न प्रकार की आपदाएं भी आती हैं। सूनामी, भूकंप तथा सूखा जैसी आपदाओं से

जनसंख्या का एक विशाल भाग विस्थापित होता है तथा इसे जल संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। भू–जल बोर्ड इन स्थानों पर विभिन्न तरीकों से पानी उपलब्ध कराता है। खासकर सूखे की मार झेल रहे लोगों के लिए स्वच्छ जल विभिन्न प्राकृतिक तथा कृत्रिम साधनों से मुहैया कराता है। सूखा ग्रसित क्षेत्रों के लिए भू–जल बोर्ड ने अब तक 3,630 कुओं का निर्माण किया है इसमें 2187 कुओं को बाहरी स्रोतों से जल प्राप्त होता है। देश में पेयजल की निरंतर बढ़ती मांग और शुद्ध जल की उपलब्धता में कमी की दोहरी मार से निपटने के लिए बोर्ड ने वर्षा जल संचयन के साथ भू–जल स्तर को बढ़ाने का उपाय भी किया है। केन्द्रीय भू–जल बोर्ड ने 165 परियोजनाओं के काम को पूरा किया है, और जल से संबंधित कई परियोजनाओं का कार्य प्रगति पर है। बोर्ड द्वारा लागू की गयी इन परियोजनाओं से भू–जल में बढ़ोत्तरी हुई और पंप द्वारा पानी निकालने की प्रक्रिया में गिरावट आई है। 1995 में स्थापित केन्द्रीय जल आयोग जल के तकनीकी पहलुओं से संबंधित प्रमुख संगठन है। पेय जल आपूर्ति में सुधार, बाढ़ की रोकथाम, सिंचाई आदि कार्यों के लिए जल संसाधनों का संरक्षण, नियंत्रण तथा उपयोग केन्द्रीय जल आयोग ही करता है। केन्द्रीय जल आयोग भारत के नागरिकों में जल संसाधनों के विकास, उपयोग और संरक्षण के बारे में जागरूकता लाता है। जल संसाधनों में देश की प्रगति और उपलब्धियों से इन्हें परिचित भी कराता है। जल संसाधनों का समुचित उपयोग, जल की गुणवत्ता से जुड़े आकड़ों का संचयन, रख–रखाव तथा प्रकाशन भी केन्द्रीय जल आयोग ही करता है। यह आयोग गाद निपटान, मृदा संरक्षण, जल–जमाव विरोधी उपाय और बाढ़ तथा सिंचाई प्रबंधन का दायित्व भी संभालता है। इस प्रकार यह आयोग जल के प्रबंधन, नियंत्रण और सर्वोत्तम उपयोग को बढ़ावा देने वाले प्रयोगों तथा अनुसंधानों को संचालित करता है। जल चक्र की अस्थिरता तथा पर्यावरणीय प्रदूषण के दुष्परिणामों के फलस्वरूप देश के अधिकांश भागों को बाढ़ की विपदा झेलनी पड़ती है। बाढ़ जल संकट का ऐसा विकराल रूप है जिसे रोकने में सरकार को अभी अपेक्षित सफलता नहीं मिल सकी है। पूरे देश के 3290 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में से 400 लाख हेक्टेयर क्षेत्र बाढ़ की आशंका से ग्रस्त है। हालांकि इनमें से 320 लाख हेक्टेयर क्षेत्र को बाढ़ से पर्याप्त सुरक्षा मुहैया करायी जा सकती है। सरकार ने इस संकट से निपटने के लिए उपाय भी किए हैं। उपाय के तौर पर सरकार ने 164.60 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर तटबंध बनाकर, जल निकासी का समुचित प्रबंध कर और गांवों को ऊंचे स्थान पर बसाकर पर्याप्त सुरक्षा मुहैया करायी है। केन्द्रीय जल आयोग ने भी बाढ़ की रोक–थाम के लिए अच्छी भूमिका का निर्वहन किया है तथा जगह–जगह पूर्वानुमान तथा चेतावनी प्रणाली लगाई है। बाढ़ के पूर्वानुमान की जानकारी 173 केन्द्रों द्वारा दी जाती है। जिनमें 195 नदी स्तर के पूर्वानुमान केंद्र है और 28 प्रमुख बांधों और बैराजों से संबंधित है। बाढ़ के कारण जल स्तर में संभावित वृद्धि और जलाशयों में जल की मात्रा का अनुमान लगा लेने से बाढ़ से काफी निजात मिल चुकी है। बाढ़ पीड़ितों को उचित पुनर्वास, शुद्ध पेयजल और समुचित मुआवजा भी उपलब्ध कराया जाता है।

भारत में सबसे बड़ी समस्या भू–जल की ही है। जिस हिसाब से भू–जल का दोहन हो रहा है खासकर औद्योगिक और कृषि कार्यों में उससे आने वाले दिनों में बहुत बड़े संकट का सामना करना पड़ सकता है। पूरे देश में कुल भू–जल की मात्रा 931.88 बिलियन क्यूबिक मीटर है। इसमें 70.93 बिलियन क्यूबिक मीटर जल घरेलू तथा औद्योगिक उपयोग के लिए और 360.80 बिलियन क्यूबिक मीटर जल सिंचाई कार्यों के लिए सुरक्षित है। पूरे देश के मंडल, जिला और तालुका की 7928 इकाइयों के आकलन के बाद 673 को अत्यधिक दोहन वाली श्रेणी में रखा गया है। सरकार के भू–जल संरक्षण कार्यक्रमों से अभी भी बहुत सी इकाइयों में जल की अच्छी क्षमता है। भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में हमेशा से जल संसाधनों के विकास, भू–जल स्तर में वृद्धि,

जल की निरंतरता, गुणवत्ता और स्वच्छ पेयजल आपूर्ति पर विशेष ध्यान दिया गया है। 2002–07 की दसवीं पंचवर्षीय योजना में सरकार ने भू–जल पर स्वामित्व अधिकार की समीक्षा की क्योंकि कुछ वर्ष पूर्व लाया गया अनियंत्रित जल दोहन विधेयक खास सफल नहीं हो सका। सरकार ने इस योजना में ग्रामीण क्षेत्रों को सतही जल पर निर्भर बनाने के लिए ग्रामीणों को प्रोत्साहित करने का कार्यक्रम भी रखा और इस कार्यक्रम में वह काफी हद तक सफल भी हुई है, इस योजना में नहरों से गाद निकालने, गहराई बरकार रखने जैसे प्रयास भी सराहनीय रहे है। भारत में वर्तमान समय में 1900 क्यूबिक मीटर प्रति व्यक्ति जल उपलब्ध है परंतु यह असमान रूप से है, वर्षा का अनुपात भी असमान है। जहां राजस्थान में औसत वर्षा 100 मिमी है वहीं चेरापूंजी में 11,000 मिमी वर्षा होती है। भारत में जल प्राप्त करने के साधनों पर निर्भरता स्थान के साथ परिवर्तित होती रहती है। पूरे भारत में 35.7 प्रतिशत लोग हैण्ड पम्प से जल प्राप्त करते है, तो 36.7 प्रतिशत नल से, 18.2 प्रतिशत तालाब, पोखर या झील से, 5.6 प्रतिशत कुंओं से 1.2 प्रतिशत लोग पांरपरिक साधन और 2.6 प्रतिशत लोग अन्य साधनों से जल का उपयोग करते हैं। चूंकि भारत में विश्व का 2.45 प्रतिशत भू–भाग और 4.5 प्रतिशत जल उपलब्धता है इसलिए हम इसका समुचित उपयोग करके जल संकट से बच सकते हैं।

तेजी से होते औद्योगीकरण का दुष्परिणाम वैश्विक ताप के रूप में हमारे सामने है। इस वैश्विक ताप ने जल संकट को बढ़ाने में बड़ी भूमिका निभायी है। दिन–रात धुआं उगलती चिमनियों से कार्बन–डाई–आक्साइड, सल्फर–डाई–आक्साइड, कार्बन–मोनो–आक्साइड जैसी गैसों के लगातार उत्सर्जन से ओजोन परत का क्षय हो रहा है और हमारी पृथ्वी अधिकाधिक उष्मा ग्रहण कर रही है। इस उष्मा के कारण ग्लेशियर पिघल रहे हैं, ग्लेशियरों के पिघलने से मीठे जल का संकट गहरा हो रहा है। कई क्षेत्रों को बेमौसम बरसात और बाढ़ का सामना भी करना पड़ रहा है। अगर ग्लेशियर इतनी ही तेजी से पिघलते रहे तो प्रारंभ में नदियों में जल की मात्रा अनावश्यक रूप से बढ़ेगी और फिर यह धीरे–धीरे कम हो जायेगी। हालांकि इससे निपटने के लिए वैश्विक स्तर पर 1992 में पृथ्वी सम्मेलन तथा 2000 में विश्व जल सम्मेलन जैसे प्रयास हुए हैं। भारत को भी जल संकट से निपटने के लिए वैश्विक सहायता प्राप्त हुई है। विश्व बैंक द्वारा दी गयी सहायता राशि से 66 परियोजनाओं को अमली जामा पहनाया जा रहा है। विश्व बैंक से सरकार को 2007 में 375 करोड़ डालर प्राप्त हुआ है, एशियाई विकास बैंक ने भी अपनी सहायता राशि में समय के साथ बढ़ोत्तरी की है। भारत सरकार ने जल को प्रकृति की अनमोल धरोहर मानते हुए ही 1987 में पहली जल नीति का प्रारूप बनाया और लागू किया। चूंकि विश्व के हर–देश का मौसम, भूगोल, पर्यावरणीय प्राथमिकताएं पृथक–पृथक हैं। इसलिए प्रत्येक देश को जल संकट दूर करने के उपायों, तरीकों और क्षमताओं के लिए देश की अनुकूलता के हिसाब से काम करना होगा।

जल के व्यावसायीकरण ने जल संकट उत्पन्न करने में बड़ी भूमिका निभायी है। वर्तमान समय में जल का व्यवसाय वैश्विक स्तर पर आर्थिक लाभ कमाने का एक बहुत बड़ा जरिया बन गया है। इस समय जल का कुल व्यापार 18 हजार करोड़ रुपए का है जिसके 2010 तक 99 हजार करोड़ रुपए होने का अनुमान है। आज जल कोल्ड ड्रिंक्स, फ्रूट जूस, मिनरल वाटर के रूप में बड़े महंगे दामों पर बेचा जाता है। भारत में बोतलबंद जल का व्यवसाय सालाना 1 हजार करोड़ रुपए तक पहुंच चुका है और 40 से 50 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि के साथ यह व्यापार में अपनी बड़ी भूमिका निभाने लगा है। तकरीबन 12 हजार बोतलबंद सयंत्रों और 100 से अधिक नामी–गिरामी कंपनियों ने भारत के बोतलबंद जल व्यवसाय पर कब्जा करने की होड़ प्रारंभ कर दी है। हालांकि इस व्यवसाय के कई नकारात्मक पहलू भी हैं। मसलन,जब कहीं ठंडे पेय का कारखाना लगाया जाता है तो भू–जल का अनियंत्रित दोहन होता है जिससे भू–जल की मात्रा धीरे–धीरे कम होने लगती हैं और समय के साथ यह शून्य हो जाती है। दूसरा नकारात्मक बिंदु यह है कि उपभोक्ताओं से इस पेय पदार्थ का लागत से कहीं ऊंचा मूल्य वसूला जाता है। उदाहरण के लिए विश्व की सबसे बड़ी कोला पेय कंपनी सरकार को 1 हजार लीटर जल पर मात्र 14 पैसे देती है जिसका सीधा सा अर्थ यह हुआ कि यह कंपनी सरकार को 1 लीटर पानी का अधिकार 0.02 पैसे चुकाकर पा लेती है। अगर हम अमेरिका और ब्रिटेन जैसे विकसित देशों की तुलना में देखें तो वहां 1 हजार लीटर के लिए कंपनी को 95 रुपए का भुगतान करना होता है। इस प्रकार इस बहुराष्ट्रीय कंपनी को भारत में सबसे सस्ता जल उपलब्ध होता है। यद्यपि सरकार यह सभी छूटें जनता के लिए देती है लेकिन कंपनियां गुणा–भाग करके, अपनी बोतलों पर किसी विदेशी शोध संस्थान की गुणवत्ता प्रमाण पत्र लेने का खर्च आदि दिखाकर अपने उत्पादों का मूल्य ऊंचा बनाए रखती है। जाहिर है हमें हमारे प्राकृतिक जल के दोहन के बदले किसी प्रकार का कोई खास लाभ नहीं मिल पाता है। आजकल बड़े–बड़े महानगरों में बोतल बंद

मिनरल वाटर का चलन आम हो गया है। 2004–05 में भारत सीलबंद पेयजल का सबसे बड़े उपभोक्ताओं में 10वें स्थान पर था। बोतलबंद पेयजल के इस व्यवसाय में 80 प्रतिशत स्थानीय विक्रेता थे। यह सभी विक्रेता भू–जल को निकालकर उसे आर.ओ (रिवर्स आंसमोसिस) में डालकर शुद्ध करके बेचते हैं। इस प्रक्रिया में जल तो शुद्ध मिलता है लेकिन उसका अधिकांश भाग बेकार हो जाता है। वॉटर प्यूरीफायर में 20 लीटर जल डालने पर मुश्किल से 5–6 लीटर जल ही शुद्ध हो पाता है और बाकी बचा 14–15 लीटर जल बेकार हो जाता है, और इसे नालों में फेंक दिया जाता है। इस तरह रोजाना लाखों लीटर जल यों ही बहा दिया जाता है। अगर जल का दोहन ऐसे ही किया जाता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब जल को लेकर बड़े–बड़े युद्ध लड़े जायेंगे। जल विवादों को देखकर लगता है कि इसका प्रारंभ भी हो ही चुका है। आज नदी, बांध, नहर से संबंधित विवाद केवल दो राष्ट्रों के मध्य ही नहीं बल्कि भारत जैसे विशाल क्षेत्रफल वाले देश के राज्यों के मध्य भी आम हो चुका है। अभी हाल ही में चिनाब नदी पर बन रही बगलिहार परियोजना को लेकर भारत–पाकिस्तान के मध्य समझौते वार्ताओं का दौर चलता रहा है तो वहीं बांग्लादेश, नेपाल, भूटान जैसे पड़ोसी भी जल विवादों को लेकर अपना रोष जताते रहे हैं। भारत के भीतर कर्नाटक और तमिलनाडु के मध्य कावेरी विवाद कई वर्षों से छाया है तो मुलला पेरियार और सरदार सरोवर की समस्याएं किसी से छिपी नहीं है। बाढ़ और सूखे से नियंत्रण पाने के लिए भारत सरकार की महत्वाकांक्षी नदी जोड़ों परियोजना पर भी आम सहमति नहीं बन पा रही है। हालांकि इन समस्याओं को लेकर विभिन्न पक्षों के मध्य सहयोग और सहायता भी देखने को मिलती रही है लेकिन जरूरत ठोस नतीजों और बेहतर प्रयासों की है।

भारत में जल रोजमर्रा की आवश्यकता ही नहीं बल्कि पूजी जाने वाली एक वस्तु है। कालिदास के मेघों से निराला के बादलों तक लगभग हर जगह जल की महत्ता दिखायी पड़ती है। इसलिए जल की महत्ता को स्वीकार करते हुए सरकारी प्रयासों के साथ–साथ आम जनता को भी हर स्तर पर सहयोग देना होगा। जल संकट का सामना करने के लिए हम विभिन्न प्रकार के उपाय अपना सके हैं। वर्तमान समय में वृक्षों की कटाई एक गंभीर समस्या है। वृक्षों के न होने पर भूमि की उपजाऊ परत कटकर बह जाती है और वर्षा का पानी भी रुक नहीं पाता। इससे उत्पादन में तो कमी होती ही है बाढ़ का खतरा भी हमेशा बना रहा है। इसलिए अधिक से अधिक वृक्षारोपण को प्रश्रय देना चाहिए। औद्योगिक कचरों से नदियां, झील, तालाब, बहुत दूषित हो चुके हैं अतः उन नियमों का कड़ाई से पालन किया जाए जिसके अंतर्गत औद्योगिक कचरे नदियों में न फेंके जाएं। चूंकि नदियों के जल को साफ करके ही पानी पीने योग्य बनाया जाता है इसलिए रासायनिक कचरों से बचाव काफी लाभकारी सिद्ध होगा। वर्षा का जल तो अनायास ही बहकर निकल जाता है, उसे रोकने के प्राकृतिक तथा कृत्रिम दोनों तरीकों का बेहतर इस्तेमाल होना चाहिए। प्राकृतिक प्रयासों के अंतर्गत तालाबों, नदियों, कुओं से गाद निकालकर इन्हें पानी के संभयन योग्य बनाया जाना चाहिए। कृत्रिम प्रयासों के अंतर्गत 'वाटर हार्वेस्टिंग' का एक अच्छा उपाय है जिसमें महानगरों, नगरों और कस्बों के मकानों की छतों पर पानी को रोके–जाने के उपाय किए जाने चाहिए। घरेलू कार्य जैसे नहाने, सब्जी काटने तथा घर धुलने में जल का प्रयोग काफी मितव्ययिता से होना चाहिए। आजकल स्वीमिंग पूल और बड़े–बड़े लौन, पार्क आदि जल के दोहन का एक बड़ा कारण है। जहां मनुष्य एक बाल्टी पानी से नहा लेता है वहीं स्वीमिंग पूल में हजारों बाल्टी पानी व्यर्थ होता है। इतने लीटर पानी को ऐसे ही बहा दिया जाता है। आज की स्थिति के लिहाज से स्वीमिंग पूलों के निर्माण को हतोत्साहित किया जाना चाहिए। कृषि उत्पादन बढ़ाने की होड़ में विभिन्न प्रकार के रासायनिक पदार्थों का इस्तेमाल बहुतायत से हो रहा है। रासायनिक खादों और कीटनाशकों के प्रयोग से भू–जल में रसायनों और कीटनाशकों का मिश्रण हो जाता है जिससे लोगों को हैजा, पेचिश और यकृत संबंधी बीमारियों का सामना करना पड़ता है। उद्योगों, घरेलू कार्यों, विभिन्न कारखानों से निकलने वाले जल को शुद्ध कर पुनः प्रयोग में लाये–जाने के तरीकों को प्रोत्साहित करना चाहिए। स्वयंसेवी संस्थाओं और व्यक्तिगत प्रयासों को सरकार समर्थन देकर जनता को वाटर हार्वेस्टिंग, भू–जल स्तर का महत्व, जल के उचित उपयोग के प्रति जागरूक कर सकती है और इन्हें भविष्य में आने वाले जल संकट की गंभीर समस्या के प्रति सावधान कर सकती है, हालांकि सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल आपूर्ति और नगरों में पेयजल समस्या, दोनों ही कार्यों में विशेष रुचि दिखायी लेकिन भ्रष्टाचारी, घूसखोरी, लापरवाही और जागरूकता के अभाव के कारण उसे विशेष सफलता नहीं मिल सकी है। यद्यपि सिर्फ नियम–कानून से किसी समस्या से मुक्ति मिलने वाली नहीं है। जब हमारे देश का ग्रामीण से लेकर शहरी क्षेत्र का नागरिक जल संकट के प्रति जागरूक होगा तभी इन कानूनों का औचित्य भी साबित होगा और संकट का समाधान भी हो सकेगा।

सी–210, द्वितीय तल, नेहरू विहार, तिमारपुर, दिल्ली–110054

प्यासी धरती – प्यासे लोग

मयंक श्रीवास्तव

भारत एक विशाल जनसंख्या वाला देश है जहां विश्व की लगभग 16 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। यह एक विडम्बना ही है कि इस जनसंख्या के लिए मात्र 4 प्रतिशत पानी ही उपलब्ध है। पहले पानी का अधिकतर प्रयोग सिंचाई के लिए होता था लेकिन अब पानी का प्रयोग औद्योगिक और घरेलू क्षेत्र में महत्वपूर्ण हो गया है। भारत में जनसंख्या और औद्योगीकरण जिस गति से बढ़ रहा है उससे भविष्य में पानी की कमी की समस्या को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। आने वाले पांच दशक के बाद पानी की कमी साफ–साफ झलकने लगेगी।

कहा जाता है कि जल ही जीवन है। जरा सोचिए अगर जल नहीं रहेगा तो क्या सृष्टि का अस्तित्व रहेगा। पुराने जमाने में जब शहर या नगर बसाये जाते थे तो इस बात का ध्यान रखा जाता था कि शहर नदी, झील या तालाब के किनारे हो। इसके कई कारण थे और शहरों के लिए नदियां आदि वरदान साबित हो रही थी। लेकिन आज नदियों के लिए तो शहर अभिशाप बन गये हैं। सभी शहर अपनी गंदगी को ढोने का माध्यम नदियों या नालों को बना ले रहे हैं। वे सोचते हैं कि पानी तो अनन्त है, यह कहां खत्म होगा। लेकिन उनका यह सोचना मूर्खतापूर्ण है। पृथ्वी पर उपलब्ध कुल पानी का केवल 0.3 प्रतिशत भाग ही पीने योग्य और शुद्ध है। औद्योगीकरण की इस दौड़ में अधिक पानी उपभोग की होड़ लगी है।

जरा उन देशों के बारे में सोचों जहां की जनता को प्रदूषित पानी भी पीने को नहीं मिलता है तथा 80 प्रतिशत बीमारियां अशुद्ध पेयजल के कारण होती है। भारत में जल प्रदूषण की समस्या केवल शहरों में ही नहीं बल्कि गांवों में भी है। गांवों की जनता के लिए पेयजल का स्रोत कुआं, तालाब, झील आदि होता है जो प्रायः प्रदूषित होता है। अतः आज अनेक क्षेत्र पेयजल की समस्या से ग्रस्त हैं। इस समस्याग्रस्त क्षेत्र के कुछ मानक हैः–

- जहां जल का स्तर 45 फीट से नीचे है।
- ऐसे गांव जहां 16 किलोमीटर के दायरे में पेयजल उपलब्ध नहीं है।
- जिस जल में विषैले तत्व हों।

फोटोः आलोक कुमार तिवारी

देश में जल की इतनी बड़ी समस्या से हम मुंह मोड़ना चाहते है लेकिन कब तक। समेकित जल संसाधन विकास पर गठित राष्ट्रीय उपयोग के अनुसार 1997–98 में 62 बिलियन क्यूबिक मीटर पानी की जरूरत थी जिसका 2050 में 1180 बिलियन क्यूबिक मीटर हो जाने की उम्मीद है। इसका तात्पर्य यह है कि दिन प्रतिदिन जल की उपलब्धता घटती जायेगी। भारत का 25 प्रतिशत भूभाग तथा 21 प्रतिशत जनसंख्या सामान्य रूप से तथा देश का 5.5 प्रतिशत भूभाग और 7.6 प्रतिशत जनसंख्या गम्भीर रूप से इस समस्या का सामना कर रही है, जहां पर प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष जल की उपलब्धता 500 क्यूबिक मी. से कम है। इस जल संकट पर विशेषज्ञों ने अपनी चिंता जाहिर की है। मैग्सेसे विजेता राजेन्द्र सिंह का कहना है कि देश इस समय भयानक जल संकट से गुजर रहा है। इसे रोकने के उपाय जल्द किये जाने चाहिए। ऐसे नियम बनाये जाने चाहिए जिससे देश के सभी लोगों को जल उपलब्ध हो सके। इस कार्यक्रम में सरकार को और भागीदारी लेनी होगी। वह खुद समस्या को समझे और समाज को समझाएं। सरकारी नीतियां व योजनाएं (स्वजलधारा, त्वरित जलापूर्ति) दिखावा बनकर रह गयी है। देश की 65 प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर है। यदि जल नहीं होगा तो सिंचाई नहीं होगी। इसका मतलब 65 प्रतिशत लोग भूखों मरेंगे और अप्रत्यक्ष रूप से यह प्रभाव अन्य जनता पर भी पड़ेगा।

अभी हाल ही में संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट प्रकाशित हुई है जिसके अनुरूप विश्व के 20 प्रतिशत लोगों को पीने का स्वच्छ जल नहीं मिल रहा है और 40 प्रतिशत लोग सफाई की बुनियादी सेवाओं से वंचित हैं। रिपोर्ट के मुताबिक इन वंचितों में आधे से ज्यादा लोग भारत और चीन के हैं।

चौथे विश्व जल मंच की 16–22 मार्च तक बैठक हुई। बैठक से पहले 'जल–एक साझा जिम्मेदारी' शीर्षक से जारी रिपोर्ट में कहा गया कि दुनिया भर में कई क्षेत्रों में काफी तरक्की हुई है। लेकिन 1.10 अरब लोग शुद्ध पानी से वंचित हैं जबकि इन समस्याओं के लिए कुप्रबंधन, भ्रष्टाचार, उचित संस्थानों की कमी, नये निवेश की कमी जैसे कारकों को उत्तरदायी माना गया है।

फोटो: आलोक कुमार तिवारी

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 1981 से 1990 के दशक को "अन्तर्राष्ट्रीय जल स्वच्छता दशक" घोषित किया और लगभग 40 देशों ने इस दिशा में कदम बढ़ाये और कार्यक्रम चलाया। पेयजल दशक तो समाप्त हो गया लेकिन जनता अब भी समस्यापूर्ण जीवन जीने को विवश है।

विडम्बना यह है कि नदियों की भूमि और मानसून की भरपूर बारिश के बावजूद भारत के अधिकतर इलाकों में गहरा जल संकट व्याप्त है। न तो किसानों को खेती के लिए पानी उपलब्ध हो रहा है और न आम जनता को अपनी प्यास बुझाने के लिए पानी मिल रहा है। कहीं न कहीं तो हमसे गलती हो रही है चाहे वह नीतियों में हो चाहे कहीं और। भारत में जल की उपलब्धता व गुणवत्ता दोनों की स्थिति काफी निराशाजनक है। भ्रष्टाचार व नीतियों में लापरवाही तो आम बात है। मुख्य बात तो जल संकट का हल ढूंढना है। केन्द्र व राज्य सरकारों ने इस पर ध्यान दिया पर नीतियों की गलत दिशा और निजीकरण बनाम सार्वजनिक क्षेत्र की बहस के मसले को सुलझाने के बजाय अधिक उलझा दिया है।

केन्द्र सरकार ने और राज्य सरकारों ने जल क्षेत्र में सुधार के नाम पर अनेक योजनाएं चलायी और उनके लिए विश्व बैंक व एशियाई विकास बैंक से ऋण भी लिये गये। लेकिन कोई कारगर कदम नहीं उठाया गया। इससे पानी के और महंगा होने की सम्भावना हैं। नदियों को जोड़ने की परियोजना भी चली तो वह भी अधर में ही लटकी दिख रही है।

व्यावसायिक गतिविधियों के बढ़े रहने के कारण जलाशय और वन का अस्तित्व खतरे में है। जलाशयों के सूखने पर उनके रख–रखाव के बजाय वहां पर भवन आदि बना दिये जाते हैं। इसके खिलाफ सुप्रीम कोर्ट ने भी आवाज उठायी और कहा पारिस्थितिकी संतुलन की कीमत पर कोई भी विकास कार्य नहीं किया जाना चाहिए"। एक सर्वेक्षण के अनुसार बंगलौर में कई झीलें, तालाब आदि मकान में बदल गये हैं। ऐसा ही कुछ दृश्य राजस्थान का भी है। इन कार्यों से कुछ लोगों के रहने और कारोबार करने की कुछ जगह तो जरूर बन जाती है मगर इससे पर्यावरण का जो नुकसान होता है उसकी क्षतिपूर्ति किसी और माध्यम से नहीं की जा सकती है।

पूरे देश में जल संकट गहराता जा रहा है। एक तरफ हम जल संरक्षण की बात करते हैं, दूसरी तरफ हम तालाबों और झीलों के संरक्षण के बजाय उन पर कंक्रीट के जंगल बनाते जा रहें हैं तो इस संकट से निपटने की उम्मीद कैसे की जा सकती है? सरकारी योजनाएं कागजों तक ही सीमित रह जाती है। अतः इसमें राज्य सरकारों के साथ जनता को भी सामने आना होगा और कुछ उपाय करने होंगे।

हम हमेशा अंधाधुन्ध पानी का प्रयोग करते हैं लेकिन क्या कभी इस बारे में सोचा है कि हमारे पास भविष्य के लिए कितना पानी उपलब्ध है। जरा इस बात पर गौर कीजिए कि अगर हम लोग इसी तरह पानी की बर्बादी करते रहें तो भविष्य की आने वाली पीढ़ियां क्या करेंगी? हम अपनी आने वाली पीढ़ियों के लिए क्या छोड़ रहे हैं? इस बात पर ध्यान देना जरूरी है। हमारे देश में भूमिगत जल का भरपूर प्रयोग किया जाता है। इसी भूमिगत जल के बेहिचक दोहन से वास्तविक जल संकट उत्पन्न हो गया है। इसका प्रयोग गांवों से लेकर शहरों की तरफ निरन्तर बढ़ रहा है। इसका अन्दाजा विश्व बैंक की हाल ही में प्रकाशित रिपोर्ट से लगाया जा सकता है, जिसमें यह कहा गया है कि घरेलू जरूरतों का 80 प्रतिशत पानी जमीन से निकाला जाता है जबकि सिंचाई क्षेत्र के लिए यह करीब 70 प्रतिशत है। इसके अलावा ज्यादातर औद्योगिक इकाईयां भू–जल पर ही निर्भर है। शीतलपेय बनाने वाली कई कम्पनियों द्वारा पानी की बर्बादी को नजरंदाज नहीं किया जा सकता है। कुएं, तालाब जैसे पारम्परिक स्रोत नष्ट होते चले जा रहे हैं। यही वजह है कि हर साल देश में भूमिगत जल का स्तर औसतन एक मीटर नीचे खिसक जाता है। कुछ क्षेत्रों में यह और भी ज्यादा है। परिणामस्वरूप देश की लगभग तीन–चौथाई जनसंख्या को पेय जल संकट से जूझना पड़ता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि जमीन से उतना ही पानी निकाला जाय जिसकी आपूर्ति वर्षा के जल से संम्भव हो सके। लेकिन यह कैसे संभव हो सकता है जब वर्षा के पानी से पूर्ति के मार्ग में हम सभी ने कृत्रिम अवरोध पैदा कर दिये हैं। हम सभी दिन–प्रतिदिन वनों का विनाश करते जा रहे हैं और वन क्षेत्र में होती इस कमी से वर्षा जल के जमीन में रिसाव से कमी आती है। देश में 170 करोड़ घन मीटर भू–जल के विशाल भण्डार उपलब्ध होने के बाद भी प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता का घटना कम आश्चर्यजनक नहीं है। अतः हम सभी को इस बात की जिम्मेदारी लेनी होगी कि कहीं न कहीं से इस बढ़ते जल संकट के लिए हम लोग जिम्मेदार हैं।

भारत में प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता

वर्ष	कुल जनसंख्या (करोड़ में)	प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता (घन मीटर में)
1901	23.8	8192
1947	33.4	5694
1951	36.1	5177
1991	84.1	3208
2001	102.7	1869
2010	114.6	1704
2050	158.1	1235

देश में अमेरिका की औसत वर्षा से 6 गुना अधिक वर्षा होती है। फिर भी हम इसका सदुपयोग नहीं कर पाते हैं। यह विपुल जलराशि हम पर प्रकृति की कृपा का संकेत है मगर इसका संरक्षण न कर पाना दुर्भाग्यपूर्ण है। जब हम जल संरक्षण की बात करते हैं तो निष्कर्ष यही निकलता है कि हमारे देशवासियों में जागरूकता की कमी है। देशवासी यह महसूस करते हैं कि पानी की मात्रा असीमित है और इसका दुरूपयोग करते हैं। इसे एक उदाहरण द्वारा समझें – पृथ्वी का दो तिहाई भाग पानी है और एक प्रतिशत से भी कम तेल है लेकिन तेल हर जगह प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है क्या? आपने इस पर कभी विचार किया? जबाव

महंगा होता पानी

जल की निरन्तर होती कमी के कारण इसकी महत्ता दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है या यूं कहें कि पानी का व्यवसाय काफी फल–फूल रहा है। यह बात इन आंकड़ों से स्पष्ट हो जाती है – भारत में पानी का व्यवसाय लगभग 700 करोड़ रुपये का है। जबकि यह 40 से 50 प्रतिशत प्रतिवर्ष बढ़ता है। पूरे देश में पानी के लगभग 500 ब्रांड हैं। वैश्विक स्तर पर भी पानी के व्यवसाय की व्यापकता कम नहीं है। विश्व की जनसंख्या के 4.5 प्रतिशत हिस्से को यह पानी प्राप्त होता है। भारत और चीन पानी के व्यवसाय में सबसे बड़े बाजार के रूप में देखे जा रहे हैं।

भारत की सबसे पुरानी कम्पनी 'बिसलेरी' के अनुसार उसका अपना व्यक्तिगत व्यवसाय 400 करोड़ रुपये प्रतिवर्ष का है। एक रिपोर्ट के मुताबिक भारत में प्रतिवर्ष औसतन 0.5 लीटर पानी की खपत है। फ्रांस में 1 लीटर पानी की कीमत 98 रुपये है तथा मुम्बई में 1 लीटर पानी की कीमत 13 रुपये होने के बावजूद 500 परिवार ऐसे हैं जो पानी खरीदने पर 1 हजार से 10000 रुपये प्रतिमाह खर्च करते हैं। अगर बोतल बन्द पानी के ग्राहकों की तुलना पूरे विश्व में की जाय तो भारत का स्थान दसवां आता है। बोतलबन्द पानी का प्रयोग सिर्फ शहरों में ही नहीं बल्कि गांवों में भी पहुंच गया है। भारतीय मानक ब्यूरो (आई.एस.आई.) के अनुसार बोतल बन्द पानी का कुछ प्रमुख कम्पनियां ही अपना कारोबार फैला रही हैं। इन कम्पनियों का मुख्य लक्ष्य दक्षिण भारत में व्यवसाय करना है। तमिलनाडु राज्य में कम्पनियों की संख्या सबसे ज्यादा है। पानी के तेजी से बढ़े कारोबार के संदर्भ में कुछ विशेषज्ञों ने कहा है कि विश्व में पानी को लेकर ऐसी छवि बनाई गई है कि लोगों के मन में पीने के पानी को लेकर शंकापूर्ण स्थिति बन गई है जिससे लोग शुद्ध पानी को लेकर पैसा खर्च करने को तैयार हैं।

साधारण बोतलबन्द पानी को तीन भागों में बांटा जा सकता है–प्रीमियम नेचुरल मिनरल वाटर, शानवेली ग्रीनों और प्रेरियर की एक लीटर पानी की कीमत 80 से 110 रुपये है वही पारले की बिसलरी, कौकाकोला की कीनले और पेप्सीको की एक्वाफिना की कीमत 10 से 12 रुपये लीटर है। बाजार में उपलब्ध कुछ ब्रांड यह दावा करते हैं कि उनके पानी में 280–90 गुना ज्यादा आक्सीजन है जिसे पीने के बाद लोग अपने आप को तरो ताजा महसूस करते हैं। यह बात अलग है कि वह स्वास्थ्य के कितना अनुकूल है सभी जानते हैं।

पानी के कारोबार को बढ़ावा देने में शादियां, पार्टियां, सभास्थल आदि जिम्मेदार हैं। एक बोलत पानी से कम्पनी को 50 से 60 प्रतिशत शुद्ध मुनाफा होता है क्योंकि ये कम्पनियां न तो अपनी गुणवत्ता बताती हैं और न सरकार को कर अदा करती हैं। जो बोतल बाजार में 10 रुपये की मिलती है उसके कच्चे माल की लागत केवल 0.02 से 0.03 पैसे तक पड़ती है।

जिन बोतलों में पानी बन्द होता है वह पर्यावरण के लिए काफी खतरनाक होता है। पर्यावरणविदों ने पानी के कारोबारियों पर आरोप लगाया है कि देश के 30 प्रतिशत लोग अपने लाभ के लिए 70 प्रतिशत लोगों को परेशान कर रहे हैं। कुछ दिन पहले अभी दिल्ली में एक रेंस्तरा मालिक ने एक ग्राहक को 12 रुपये की बोतल 34 रुपये में बेची। इस तरह की घटनाओं से यह बात स्पष्ट हो गई है कि अब लोगों को जल की एक–एक बूंद बचाना ही होगा, वरना आने वाले समय में जल संकट तृतीय विश्व युद्ध होने का संकेत दे रहा है। भगवान सबको सद्‌बुद्धि दे।

स्पष्ट है कि पानी हमें निःशुल्क प्राप्त होता है और इसके दुरूपयोग पर रोक नहीं है लेकिन तेल की हमें कीमत चुकानी पड़ती है इसलिए इसका प्रयोग हम सोच–समझ कर करते हैं। संक्षिप्त रूप में कहा जाए तो पर्यावरणीय समस्या का मूल यही है कि प्राकृतिक साधन हमें निःशुल्क प्राप्त है और इसका प्रयोग गैर जिम्मेदाराना तरीके से करते हैं।

अतः इसे हम 'सार्वजनिकता की त्रासदी' कह सकते है। सार्वजनिक संसाधनों का प्रयोग करने के लिए सभी आतुर है, लेकिन जब इनके संरक्षण की बात आती है तो सभी किनारा कर लेते हैं। हमारे देशवासी किसी समस्या को इतनी जल्दी समझ ही नहीं सकते। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इस तरह के संसाधनों का निजीकरण कर देना चाहिए।

पानी मानव जीवन के लिए एक महत्वपूर्ण और अनिवार्य अंग है। प्रत्येक व्यक्ति को एक न्यूनतम मात्रा में पानी चाहिए ही लेकिन अगर देखा जाय तो यह न्यूनतम स्तर किसी निश्चित मात्रा में निर्धारित नहीं किया जाना चाहिए। एक सर्वेक्षण के अनुसार डेनमार्क (ग्रीनलैण्ड) में 1980 में प्रतिव्यक्ति जल का उपयोग 238 क्यूबिक मीटर था जो 2000 में कम हो करके 198 क्यूबिक मीटर रह गया। इसका यह मतलब तो नहीं है कि वहां के निवासियों ने नहाना या पानी पीना कम कर दिया। इसका कारण यह है कि वहां की जनता को पानी निःशुल्क नहीं मिलता है। इसलिए वे जागरूक हुए, पानी बचाने के नये–नये उपाय खोजे और पानी के उपभोग पर अंकुश लगाया। इसी तरह की कुछ पहल करने की जरूरत हमारे यहां भी है। गांव और शहरों में पानी का मीटर लगाया जाना चाहिए। यह व्यवस्था अमीरों और गरीबों के लिए अलग–अलग होनी चाहिए। क्योंकि कुछ लोग इसका विरोध करते हैं। अगर आप यह सोचते हो कि पानी का मीटर लगाया या उसकी रीडिंग करना बहुत कठिन कार्य है तो इस भ्रम से बाहर आइये। वर्तमान दौर में ज़ब मोबाइल और टेलीफोन के एक–एक काल की अलग–अलग रीडिंग की जा सकती है तो प्रत्येक घरों में खर्च होने वाले एक–एक बूंद पानी का हिसाब लगाया जा सकता है। अन्तर इतना ही है कि अगर यह सब कुछ तकनीकी के माध्यम से नहीं हो सकता तो हमें व्यक्तिगत रूप से अपनी सोच के तरीकों में बदलाव लाना होगा। अगर ऐसा नहीं हुआ तो भविष्य में आने वाली परिस्थितियों के लिए तैयार रहे।

जल प्रबंधन पर यूनेस्को रिपोर्ट

यूनेस्को ने मार्च 2006 में प्रकाशित रिपोर्ट में जल प्रबंधन संबन्धी विभिन्न मुद्दों को शामिल किया है। रिपोर्ट ने कुछ निष्कर्ष निकाले हैं।

- जल की कमी, जल की कमी के कारण नहीं बल्कि अपर्याप्त आपूर्ति के कारण।
- जल समस्या का समाधान बेहतर साधन में निहित।
- जल समस्याओं और चुनौतियों पर समग्र रूप से ध्यान दिया जाए।
- जल सम्बंधी आंकड़े विश्वसनीय होने चाहिए।
- जल क्षेत्र में और अधिक निवेश की जरूरत है।
- अधिक पारदर्शिता और जवाबदेही की जरूरत है।
- सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्यों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग आवश्यक है।

जल संरक्षण के उपाय

जल संरक्षण की समस्या वैयक्तिक नहीं है। यह समस्या वैश्विक है। अगर समय रहते हम जागरूक नहीं हुए तो निश्चित ही आने वाले दिनों में तस्वीर भयानक होगी। रहीम दास जी ने कहा है कि "रहिमन पानी राखिए बिन पानी सब सून" यह उक्ति किताबों की पंक्तियां मात्र नहीं है बल्कि लगभग 400 वर्ष पूर्व जल संरक्षण के संबंध में दी गयी चेतावनी है। इसकी प्रासंगिकता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। हमें किसी न किसी तरह से जल का संरक्षण करना है वह चाहे वैयक्तिक हो या सामूहिक हो। पानी की खपत दिन प्रतिदिन बढ़ रही है और ऐसे में अगर हम पानी को बचाएंगे नहीं तो जीवन जीना दुर्लभ हो जाएगा। जरा सोचिए पानी के बिना कैसा होगा जीवन? क्या संभव है? अगर नहीं तो हमें इसका संरक्षण करना ही होगा। जगह–जगह पर वाटरशेड कार्यक्रम चलाया जाना चाहिए जिससे गांव का पानी गांव में ही रहे।

जल संचयन के लिए हमें नदियों पर बांध बनाकर और नलकूप आदि द्वारा वर्षा का जल संचयित किया जा सकता है। कई राज्यों में यह योजना सफल रही है जैसे – राजस्थान। अतः गिरते जल स्तर को सुधारने के लिए महत्वपूर्ण उपाय जल संचयन ही है। हमें वर्षा का जल, अपनी छतों और आस–पास के गड्ढों के पानी को भी बचाना चाहिए। एक अनुमान के अनुसार 50 वर्ग मी. आकार की छत से एक वर्ष में लगभग 33 हजार लीटर पानी एकत्र किया जा सकता है। इस जल से 2 सदस्यों को पेय जल और घरेलू आवश्यकता हेतु जल लगभग 3 माह तक उपलब्ध हो सकता है। देखा जाय तो अप्रत्यक्ष रूप से जल स्तर में वृद्धि से ऊर्जा की भी बचत होती है। जल बचत हम लोग भी सदुपयोग के माध्यम से कर सकते हैं –

- पानी कम से कम खर्च करें।
- जितना आवश्यक हो उतना ही पानी प्रयोग करें।
- जल संरक्षण के सम्बन्ध में जन जागरूकता फैलाएं।
- पानी की टोंटी प्रयोग के बाद बन्द कर दें।

देशों में पानी की औसत खपत

देश	घन मी. प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष
अमेरिका, स्पेन, सूडान	2100–2500
कनाडा, रूस, फ्रांस	1800–2100
जर्मनी, स्वीडन	1500–1800
ब्राजील, अर्जेन्टीना, नार्वे, आस्ट्रेलिया	1300–1500
बोलिविया, ब्रिटेन, पाकिस्तान	1200–1300
अल्जीरिया, मेडागास्कर	1000–1200
भारत, पराग्वे, चिली, जापान	800–1000
वेनेजुएला, नामिबिया, पेरू, कांगो	600–800

- जो पानी खाना बनाने में प्रयोग करने से बचे उसे बगीचों में प्रयोग करें
- कपड़ा धुलने के बाद गन्दे पानी का प्रयोग शौचालयों में करें।
- कहीं पानी बहता हुआ देखे तो उसके बारे में सोचे।

अगर हम सभी जागरूक हो जाएं तो हमें लगता है कि जल संकट की समस्या खत्म हो सकती है। हम सभी जानते हैं कि पानी का कोई विकल्प नहीं है। बिना इसके जीवन खतरे में है। अतः हम प्रकृति प्रदत्त चीजों को बचाने का प्रयास करें। सभी को इसकी जिम्मेदारी लेनी चाहिए। समाज के सभी स्तरों पर समुचित कार्रवाई और सहयोग की जरूरत है। समुदाय स्तर पर व्यक्तियों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। उन्हें अपनी जिम्मेदारी स्वयं संभालने के साधन उपलब्ध कराये जाने चाहिए। इसी प्रकार स्थानीय और राष्ट्रीय स्तरों पर सरकारों को अपने हिस्से की जिम्मेदारी वहन करनी चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ऐसे लक्ष्य और उद्देश्य निर्धारित होने चाहिए जिनकी तरफ विश्व को भी प्रयासशील होना चाहिए तथा ज्ञान के आदान–प्रदान के वैश्विक स्थितियों का जायजा लेना चाहिए।

135/35सी/1 छोटा बघाड़ा, इलाहाबाद

महक मोहब्बत की, झलक विकास की

महसूस करना चाहते हैं महक मोहब्बत की, देखना चाहते हैं झलक विकास की, तो आपको चलना पड़ेगा झालावाड़ जिले के खानपुर कस्बे में। झालावाड़ से लगभग 35 कि.मी दूर बसा खानपुर पंचायत समिति मुख्यालय है जहां ख्वाजा गरीब नवाज़ महिला स्वयं सहायता समूह से जब आपका सामना होगा तो आप इस कहानी की सच्चाई को समझ भी पाएंगे और महिला सशक्तिकरण का एक सशक्त उदाहरण देख भी पाएंगे।

"मोहब्बत तो बनी बनाई है" समूह की कोषाध्यक्ष जुमरत बाई पताक से जवाब देती हैं जब उनसे पूछा कि "ख्वाजा गरीब नवाज़ समूह" नाम क्यों?

अध्यक्ष कांतिबाई कहती हैं कि ख्वाजा गरीब नवाज तो सबके हैं, सबका भला चाहते हैं हमारा भी भला हो यह सोच कर नाम रखा। बारह महिलाओं के इस समूह में 10 मुस्लिम तथा दो हिन्दू महिलाएं हैं। दिसम्बर 2001 में बना यह समूह आर्थिक उन्नति की मिसाल भी है तो हमारे देश की विशेषता साम्प्रदायिक सद्भाव का सुखद अहसास भी।

इस समूह को हाड़ौती क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की खानपुर शाखा से पहले पहल 25 हजार रुपए का ऋण मिला जिसमें से 10 हजार अनुदान था। इन 12 महिलाओं ने 4–4 का समूह बनाकर ढाबा, चूड़ी और फल–फ्रूट की दुकानें खोलीं। इनकी मेहनत, इनका मिलनसार स्वभाव तथा इनमें लक्ष्य के प्रति मजबूती ऐसे मिले की सफलता सामने आ गई। 21 जुलाई 2004 को समूह को इन व्यवसायों को बढ़ाने के लिए ढाई लाख रुपए का ऋण इसी बैंक से मिला। सरकार की योजना के तहत इसमें से एक लाख 15 हजार अनुदान था सो एक लाख 35 हजार रुपए इस समूह को चुकाना था, जो इन्होंने चुकाने में कोई कसर नहीं रखी, लगभग सारा चुकता हो गया है।

इनकी खुद की बचत जो समूह बनाते वक्त बीस–बीस रुपए से शुरू की गई है आज 23 हजार रुपए की राशि बन गई है जिसको जरूरत पड़ने पर यह समूह आपस में लेनदेन करता हैं। समूह की बैठकों, समूह का रिकार्ड सब सलीके से चल रहा है, यही सलीका उनके आपसी व्यवहार में भी आप सूंघ पाएंगे।

भारत निर्माण अभियान के लिए खानपुर में जब इनसे संपर्क हुआ तो इन्हें भी स्टाल लगाने के लिए कहा गया।

स्टाल क्यों "सवाल इनका था, जवाब भी इन्होंने ही दिया" **ताकि हमारे काम को देखकर बाकी लोग प्रेरणा ले सकें"।** समझ, सलीका सामर्थ्य और सफलता सब संभव है, सरकार और संस्थाएं मिलकर इसे एक शाश्वत सत्य बना सके हैं, इसका पुख्ता प्रमाण है खानपुर का ख्वाजा गरीब नवाज महिला स्वयं सहायता समूह।

खेती में पानी का बढ़ता अभाव और नई सिंचाई प्रणालियों का विकास

ईशानदेव

कृषि प्रधान देश होने के नाते भारत में सर्वाधिक पानी की खपत खेती में ही होती है, जो हमारे सकल पानी के उपयोग के 80 प्रतिशत के आस–पास बैठती है। इसके साथ ही बढ़ती आबादी के साथ खाद्यान्नों की बढ़ती मांग के चलते खेती के क्षेत्र में पानी की मांग में भी लगातार बढ़ोत्तरी हो रही है। साथ ही उद्योग, गृह कार्य, विद्युत उत्पादन के क्षेत्र में भी पानी की मांग उत्तरोत्तर बढ़ाव की ओर है जो तालिका संख्या एक से स्पष्ट है।

पानी की बढ़ती मांग के मद्देनजर जहां खेतों की सिंचाई में पानी की कटौती की चर्चा होने लगी है वहीं उपलब्धता में भी लगातार कमी की बात कही जा रही है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में पड़ रहे सूखे और नलकूपों द्वारा पानी के अनियोजित दोहन के चलते भूगर्भिग जल में लगातार कमी होती जा रही है, जिसके दुष्परिणाम के रूप में हरित क्रांति के अगुआ पंजाब और हरियाणा के कई जिलों का भूमिगत पानी खतरनाक हालत तक नीचे चला गया है। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश के आगरा सहित कई क्षेत्रों में अनियोजित पानी की निकासी के कारण अब पंपिंग सेटों से पानी की प्राप्ति संभव नहीं रह गई है, जिसके चलते इन क्षेत्रों के किसानों ने भूमि के निचले स्तर से जल निकालने के लिए सबमर्सिबल पंपों का प्रयोग करना शुरू किया है। उत्तर प्रदेश में कई वर्षों से वर्षा की कमी के चलते बुन्देलखंड और उसके आसपास के कई जिलों के साथ

भूमिगत जल का बेहिचक दोहन

ही पश्चिमी तथा मध्वर्ती भागों के अलावा पूर्वांचल के कई जिलों का भूमिगत जलस्तर बहुत नीचे चला गया है, जिसके चलते पंपिंग सेटों और नलकूपों के पानी न उठाने की बात आम हो गई है। कमोबेश बिहार, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश की भी हालत लगभग इसी प्रकार की है। कई क्षेत्रों के किसानों के सम्मुख सूखा, अवर्षण और जलाभाव के कारण भुखमरी की हालत पैदा हो गई है।

पानी की इस नाजुक हालत और लगातार बढ़ती मांग को देखते हुए अब समय आ गया है कि हम सर्वाधिक उपयोग वाले

तालिका–1 विभिन्न क्षेत्रों में होने वाली जल की खपत

क्षेत्र	1990		2000		2025 (संभावित)	
	घन किलोमीटर	कुल खपत का प्रतिशत	घन किलोमीटर	कुल खपत का प्रतिशत	घन किलोमीटर	कुल खपत का प्रतिशत
कृषि	460	83.3	630	84.0	770	73.3
घरेलू	25	4.5	33	4.4	52	4.9
उद्योग	15	2.7	30	4.0	120	11.4
ऊर्जा	19	3.4	27	3.6	71	6.76
अन्य	33		30		37	
कुल योग	**552**		**750**		**1050**	

कृषि में सिंचाई के लिए जल की मितव्ययी कुशल प्रणालियों का प्रयोग कर जल के खर्च में कमी लायें। इसके लिए हमें निम्न उपायों पर ध्यान देना होगा।

- सिंचाई में जल अपव्यय को रोकना।
- पानी कम खर्च करने वाली नई सिंचाई प्रणालियों का विकास।
- कम पानी में उत्पाद देने वाली फसलों का विकास।
- फसलों और मिट्टी के अनुसार संतुलित सिंचाई।

सिंचाई में जल अपव्यय को रोकना: आज सिंचाई की परंपरागत प्रणाली से हमारे खेतों तक पहुंचने वाले पानी का 25 से 45 प्रतिशत तक भाग व्यर्थ चला जाता है। नालियों के माध्यम से होने वाली सिंचाई में फसलों की क्यारियों तक पहुंचने के पूर्व ढेरों पानी नालियों द्वारा सोख लिया जाता है। रख–रखाव के अभाव में ये नालियां क्षतिग्रस्त हो जाती हैं, साथ में चूहे व अन्य जीवों द्वारा सिंचाई की नालियों में छेद बना दिया जाता है, जिससे खेतों तक पहुंचने के पहले ही बड़ी मात्रा में पानी व्यर्थ चला जाता है। इस दोषपूर्ण सिंचाई प्रणाली से निजात के लिए आवश्यक है कि हम ऐसे साधनों का प्रयोग करें जिससे सिंचाई का पानी सीधे फसलों की क्यारियों तक पहुंचे। इसके लिए हमें आधुनिक सिंचाई साधनों के रूप में पाइप, स्प्रिकल (फुहार), और ड्रिप सिंचाई प्रणालियों का प्रयोग करना चाहिए।

कम पानी खर्च करने व नई सिंचाई प्रणालियों का विकास: हमें ऐसी नई सिंचाई प्रणालियां खोजनी चाहिए जिनसे जल खर्च तो कम से कम हो लेकिन फसलों को उनकी जरूरत के अनुसार पानी मिल सके, जिससे खेती में उत्पादन तो पूरा प्राप्त हो, लेकिन पानी कम से कम खर्च हो।

सिंचाई योजना के तहत लहलाती फसल

फसल सिंचाई के लिए फुहार प्रणाली

कम पानी में उत्पादन देने वाली नई फसलों का विकास: जीनियागिरी के वर्तमान युग में अलग–अलग क्षमताओं के जीनों के मेल मिलाप से विशेष क्षमताओं वाली फसलों का गढ़ा जाना संभव हो गया है। आज इस प्रविधि का प्रचलन जोरों पर है। प्रयोगशालाओं में जीनों के हेर–फेर से बनी ये फसलें कई तरह के नये गुणों से युक्त होती हैं। समय के अनुसार आवश्यकता इस बात की है कि कृषि एवं जैव वैज्ञानिक अपने शोध के माध्यम से ऐसी नई फसली प्रजातियों का विकास करें, जो अपने मूल फसल की तुलना में कम से कम पानी लेकर भरपूर उत्पादन देने में सक्षम हों।

फसलों के अनुसार संतुलित सिंचाई: अधिकतर भारतीय किसानों में फसल के अनुसार जलापूर्ति की जानकारी का सर्वथा अभाव है। अधिकांश किसानों में यह धारणा है कि अधिक पानी की आपूर्ति से अधिक उपज की प्राप्ति होगी। इसके विपरीत वैज्ञानिक तथ्य यह है कि सिंचाई के रूप में फसलों को संतुलित जल की कुशलतापूर्वक आपूर्ति से ही फसलों से उच्चतम उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। फसलों में अंधाधुन्ध जल प्रयोग से जल जैसी महत्वपूर्ण प्राकृतिक संपदा की बर्बादी होती है। ● उत्पादन में गिरावट आती है। ● भूमि के भौतिक और रासायनिक तथा जैविक स्थिति में गिरावट आती है। ● मृदा की उर्वरा क्षमता में गिरावट आती है। ● फसलों के लिए उपयोगी पानी में शीघ्र घुलनशील नत्रजन जैसे तत्वों की मृदा में कमी हो जाती है। ● मृदा में क्षारीयता, सैम और जलप्लावन जैसे विकार उत्पन्न होते हैं। ● खादों की उपयोग दक्षता की स्थिति में गिरावट आ जाती है। ● सूक्ष्म जैविक तत्वों का ह्रास होता है। ● फसलों में कीट पतंगों की बढ़ोत्तरी होती है। ● किसानों को व्यर्थ जल के

तालिका–2 रबी की मुख्य फसलों की सिंचाई की मांग और आपूर्ति

क्रम सं.	फसल	कुल जल–मांग (से.मी.)	सिंचाई संख्या	प्रति सिंचाई में जल–मात्रा (से.मी.)	क्रांतिक अवस्थाएं (सामान्य)	अधिक संवेदनशील क्रान्तिक अवस्थाएं
रबी फसलें						
1.	गेहूं	40–50	5–6	6–8	शीर्ष जड़ जमने, फुटान गांठ बनने, बाली निकलते समय, दानों की दूधिया अवस्था, ड़फ अवस्था	शीर्ष जड़ जमने व बाली बनते समय
2.	जौ	25–30	2–3	7–8	फुटान, बाली निकलते समय व दूधिया अवस्था	फुटान के समय
3.	सरसों	20–30	2–3	6–9	फूल बनने से पूर्व फलिया बनते समय	फूल बनते समय
4.	चना	20–25	1–2	7–8	शाखा बनने व फली बनने पर	फली बनने पर
5.	मसूर	20–30	2	6–8	शाखाएं बनने व फली में दाना पड़ते समय	फूल बनते समय

खेतों में क्यारियां बनाकर जरूरत अनुसार पानी का इस्तेमाल

लिए अनावश्यक खर्च करना पड़ता है, जिससे फसल पर उनकी लागत कीमत बढ़ जाती है।

अतः दीर्घकालीन और न्यूनतम जल व्यय पर आधारित कृषि के लिए फसलों की कुशलतापूर्वक संतुलित सिंचाई की व्यवस्था सभी दृष्टियों से उपयोगी और लाभकारी रहती है। इस दिशा में विशेषज्ञों ने अलग–अलग फसलों की जल की मांगों के मद्देनजर किसानों में मृदा और फसल के अनुसार समयबद्ध सिंचाई की जानकारी उपलब्ध कराकर उसके अनुसार सिंचाई पर जोर दिया है। तालिका संख्या–2 के द्वारा रबी की प्रमुख फसलों की समयानुसार सिंचाई की जरूरतों को दर्शाया गया है। इस तालिका में दिये गए फसलों की विभिन्न स्थितियों पर निर्धारित मात्रा में सिंचाई के माध्यम से जहां फसलों से अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है वहीं पानी की बचत भी की जा सकती है। फसलों की जलापूर्ति (सिंचाई) के लिए खेत की मिट्टी की बनावट का भी विशेष महत्व है। अलग–अलग बनावट वाली मिट्टी में पानी रोक सकने की क्षमता एक जैसी नहीं होती। अतः किसान को अपने खेत की मिट्टी के विषय में अच्छी प्रकार से समझ–बूझ कर बोई गई फसलों के अनुसार सिंचाई योजना पर अमल करना चाहिए। इससे जहां पानी की फिजूलखर्ची रुकेगी वहीं उत्पादन भी अच्छा होगा।

आज हमें घटती जल संपदा और बढ़ती आबादी के बीच कृषि उत्पादन बनाये रखने के लिए उपरोक्त तथ्यों और सूचनाओं को विभिन्न माध्यमों से किसानों में ले जाकर उन्हें शिक्षित–प्रशिक्षित कर जल की बचत को आंदोलन का रूप देना चाहिए। इस काम में गैर–सरकारी समाजसेवी एवं सरकारी संस्थाओं के प्रशिक्षित कुशल कार्यकर्ताओं की टीम को गांवों में उतर कर गोष्ठी, कार्यशाला, प्रशिक्षण का सघन कार्यक्रम चलाना चाहिए। इसके साथ ही कृषि एवं विज्ञान पत्रकारों को आगे आकर प्रिन्ट और इलेक्ट्रानिक जनसंचार साधनों से सिंचाई में पानी की बचत वाली प्रणालियों का भरपूर प्रचार–प्रसार कर खेती में जल संरक्षण प्रक्रिया पर बल देकर उसे आंदोलन के रूप में गांवों और किसानों के बीच ले जाना चाहिए।

डी 53/100, छोटी गैबी, लक्सा रोड, वाराणसी–221005, उ.प्र.

ताकि यह हरियाली बनी रहे.....

प्रांजल धर

हाल के कुछ सालों में पर्यावरण, नदियों, झीलों, पारिस्थितिकी और जैव–विविधता को लेकर पूरे संसार में अक्सर चिंताएं व्यक्त की गई हैं। जापान की ट्यूब ट्रेन हो या फैशन की नगरी पेरिस, वाशिंगटन की आधुनिक तकनीकें हों या फिर नाभिकीय हथियारों के प्रसार का खतरा। पर्यावरण और प्रदूषण के साथ इनके गतिशील संबंधों को गहराई से रेखांकित किया जा रहा है। पर्यावरण पर चर्चा सिर्फ इसीलिए जरूरी नहीं है कि विकास के प्रतीक माने जाने वाले बांधों के बनने से लोग विस्थापित हुए हैं, कि उनकी ग्राम्य लोक जीवन शैली पर नकारात्मक असर पड़ा है. .....कि स्थानीय समुदायों या आदिवासियों की संस्कृति पर खतरों के बादल मौजूद हैं.....कि दुर्लभ क्रीस्ट सर्पेट चीलों की तादाद में कमी आ रही है.....कि पश्चिमी घाट के एक दुर्लभ देशज पौधे कुंडस्टेलेरिया केरालेनेसिस को देखभाल की जरूरत है या फिर काले हिरन के नाम से जाने जाने वाले एंटीलोप सर्विकापरा संरक्षण और सुरक्षा की मांग कर रहे हैं। पर्यावरण का ध्यान रखना इसलिए भी जरूरी है ताकि हम आने वाली पीढ़ियों को एक बेहतर वातावरण और एक सुंदर दुनिया दे सकें।

पत्थरों के औजारों वाले आदिम मनुष्यों से शुरू हुई आज तक की विकास की महायात्रा में कई नकारात्मक पहलू भी सामने आए। सभी प्राणियों में मनुष्य को श्रेष्ठ माना गया है। फिर आधुनिक मनुष्य तो शिक्षित, समझदार, चिंतनशील और नई तकनीकों से लैस है। लेकिन अफसोस इस बात का है कि केवल मनुष्य ही एक ऐसा जीव है, जो अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्यावरण की शृंखला या उसके संतुलन को हानि पहुंचाने में पीछे नहीं हटता। क्या आज की पर्यावरणीय समस्यायें प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन का परिणाम नहीं हैं? क्या लाखों मासूमों को लील लेने वाली प्राकृतिक और मानवजनित आपदाएं हमें सावधान नहीं करतीं?

फोटो: परमार

वाहनों की लगातार बढ़ रही संख्या, धुंआ उगलती और औद्योगीकरण का स्तम्भ कही जाने वाली चिमनियां, महासागरीय जल में रासायनिक प्रदूषण की वजह से छटपटाते समुद्री जीव और सल्फर डाई ऑक्साइड से भरे दमघोंटू और अस्वच्छ वातावरण में सांस लेते आदमी क्या यही विकसित मानवता का लक्ष्य था? जीवाश्म ईंधनों की बेतहाशा खपत ने कई गंभीर संकट खड़े किये हैं। नाभिकीय ऊर्जा के इस्तेमाल से खतरनाक रेडियोधर्मिता बढ़ी है और पौधों की लगातार हो रही कटाई ने निर्वनीकरण की हालत पैदा कर दी है। बात यहीं खत्म नहीं होती। बाढ़ की समस्या की मुख्य वजह मृदा–अपरदन है। लाख प्रयासों के बावजूद मृदा–अपरदन एक परेशानी ही बना हुआ है और समय–समय पर हो रही भू–स्खलन की घटनाएं इस समस्या को और भी गहरा बनाती हैं। कोंकण, मालाबार, कोरोमंडल या उत्तरी सरकार जैसे तटीय इलाके तो समुद्र के अग्रगमन और पश्चगमन से परेशान रहते ही हैं, मैदानी मुख्यभूमियों में बढ़ रहा मरुस्थलीकरण भी चिंता का एक अलग विषय है।

नदियों की बात करें तो ये भी कूड़े–कचरे से परेशान ही हैं। गंगा में घुलित आक्सीजन की मात्रा गंगोत्री से लेकर सुंदरबन के डेल्टा तक लगातार घटती ही जाती है। लेकिन जैव–विविधता की उलझनें सिर्फ इतनी ही नहीं हैं। नदियों के मार्ग परिवर्तन के साथ–साथ भूमंडलीय तापन एक विश्वव्यापी समस्या है और प्राणि जगत या वनस्पति जगत की कई प्रजातियों पर विलुप्त होने के संकट जारी हैं। प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास, लगातार चुकते जा रहे कोयला और पेट्रोलियम जैसे पांरपरिक ऊर्जा स्रोत और ओजोन परत का पतला होना कुछ दूसरी परेशानियां हैं। गहरे रंग के बदन पर खूबसूरत पीले सितारों वाला कछुआ अगर भारत से याचना कर रहा है कि हमें बचा लो, तो आर्कटिक महासागर की मादा वालरस मछलियां भी पश्चिमी और 'विकसित' देशों से अपने जीवन की भीख मांग रही हैं। क्या इन्हें बचाया जा सकेगा?

जैव–विविधता या पर्यावरण के बचाव की जरूरत हमें सबसे ज्यादा क्यों है? इसलिए क्योंकि

भारतीय प्राणि सर्वेक्षण ने इस साल महत्वपूर्ण पारितंत्रों और कुछ चुनिंदा सुरक्षित क्षेत्रों समेत पूरे देश में एक सौ एक व्यापक प्राणिजात सर्वेक्षण किए। लद्दाख के हिमालयी मारमॉट और तिब्बती जंगली गधों के बारे में भी जानकारियां बटोरी गईं। टेरोमैलिडे, यूरिटोमिडै और डैफनीडै परिवारों से जुड़ी नई खोजें गौर करने लायक हैं। इन्हें नए व्यंजनों के रूप में भी देखा जा रहा है।

भारत को प्रकृति के ऐसे अनमोल वरदान मिले हैं जो किसी दूसरे देश के लिए दुर्लभ हैं। बात सिर्फ इतनी ही नहीं है कि हम संसार के उन सत्रह विशाल जैविक–विविधता वाले देशों में शामिल हैं जहां दुनिया की दो–तिहाई से भी ज्यादा जैव–विविधता है। अपनी विशिष्ट–भौगोलिक स्थिति के कारण हमारे पास अपना समुद्र है और अपना समुद्री परितंत्र भी। अंडमान–निकोबार, लक्षद्वीप, कच्छ की खाड़ी और मन्नार की खाड़ी अगर मूंगे की चट्टानों (प्रवाल भितियों या कोरल रीफ्स) के लिहाज से अप्रतिम हैं तो हमारे समुद्र तट की कच्छ वनस्पतियां भी कम आकर्षक नहीं हैं। इन कच्छ वनस्पतियों (मैंग्रोव) में क्षार सहन करने की जबरदस्त क्षमता है और ये समुद्र द्वारा हो रहे कटाव से हमारे तटबंधों की हिफाजत करती हैं।

भारत दुनिया के उन थोड़े से देशों में से एक है जहां कुछ कच्छ वनस्पतियों की तो सबसे अच्छी प्रजातियां पाई जाती हैं। एक आम कच्छ वनस्पति पाम (नाइफाफ्रूटिकंस) का नाम शायद सबने सुना होगा। देश में मैंग्रोव्स की करीब सत्तर प्रजातियां पाई जाती हैं। ये ऐसी विपरीत परिस्थितियों में पनपती हैं जिनमें दूसरे पौधे सामान्यतया नहीं टिक सकते। औषधि या ईंधन–लकड़ी उपलब्ध कराने के अलावा मैंग्रोव्स तमाम जातियों के प्राणियों और पौधों की शरणस्थली भी हैं। ये सिर्फ समुद्री चक्रवातों या तटीय तूफानों से हमारी रक्षा ही नहीं करतीं बल्कि मछली उद्योगों को बढ़ावा देने के साथ–साथ मृदाक्षरण को भी रोकती हैं।

अफसोस की बात है कि इधर मैंग्रोव पारिस्थितिकी को तमाम मानवीय और जैविक दबाव झेलने पड़े हैं। मैंग्रोव संरक्षण कार्यक्रम की कोशिशों के बावजूद जैव–विविधता की क्षति हुई है। इससे जीव–जन्तुओं और उनके प्रवास के मार्गों पर भी बुरा असर पड़ा है। इतना ही नहीं, दो कच्छ वनस्पतियां तो लुप्त होने की कगार पर हैं। पहली है राइजोफोरा अन्नामलायना जो तमिलनाडु के पिछावरम में पाई जाती है। पानी के किनारे पतली, टेढ़ी और सघन डंडियों की दीवारों की तरह खड़ी यह वनस्पति अपनी विशिष्ट खूबसूरती रखती है। दूसरी है हेरीटेरिया कनिकेंसिस। यह उड़ीसा के भितरकनिका में पायी जाती है। इनके बारे में लोगों को जागरूक और शिक्षित करना जरूरी है। इन कच्छ वनस्पतियों के सर्वेक्षण और सीमांकन के साथ–साथ इन्हें बचाना और बढ़ाना भी महत्वपूर्ण है ताकि यह विविधता बनी रहे। सुंदरबन, धामरा, कोरिंगा, मुथुपेट, पुलिकट, काझुवेली, वेम्बानद, होन्नावर, कारवाट, वेल्दुर, मालवन, वैतरना और डुमास–उब्रात कुछ प्रमुख कच्छ वनस्पति क्षेत्र हैं। सुंदरबन तो हमारे देश का सबसे बड़ा कच्छ वनस्पति क्षेत्र हैं। कितने क्षेत्र तो ऐसे हैं जिनकी पहचान करना अभी बाकी ही है।

फूलों, पौधों और तरह–तरह के जीव–जंतुओं से समृद्ध हमारा देश वास्तव में जैव–विविधता का भंडार है। अपनी मादक छटा बिखेरता हुआ औषधीय फूल करातावा नरवाला हो या फिर नन्दादेवी की पीली सुनहरी गोल्डन लिली– एक से बढ़कर एक फूल और पौधे हमारे यहां मौजूद हैं। निकोबार द्वीप समूह की पाम स्थानिक मारी बनटिंककिया निकोबारिका हो या बहार में खिलकर निखर आई जंगली पीत, कुछ–कुछ बंदगोभी जैसी दिखने वाली अल्पाइन औषधीय बूटी ब्रह्मकमल (सस्सूरिया ओबवालाटा) हो या फिर नंदादेवी राष्ट्रीय पार्क का बड़ा–सा सुंदर हिमालयी कमल–ये भारतीय फूलों–पौधों के सिर्फ एक नमूने भर हैं। हिमाचल प्रदेश के रेनुका वन्यजीव अभयारण्य में व्हाइट जिंजर (हेडाईचियम कोरोनियम) तो देखते ही बनता है! राजमहल (झारखंड) में चमगादड़ों (प्टेरोपस जाइजेंटिकस) का आराम करता समूह या हिमालय की हरियाली से भरपूर जांसकर घाटी किसका मन नहीं मोह लेगी? मणिपुर में शिरायलिली के फूल वहां के शिरायगांव के अलावा पूरे संसार में कहीं नहीं पाए जाते। शिरायलिली (लिलियम मैक्लीनी) को 'स्वर्गपुष्प' भी कहा जाता है। अपनी जैव–विविधता के लिए विख्यात मणिपुर की जूको घाटी में दुर्लभ किस्म के फूल जूको लिली (लिलियम चित्रांगद) भी पाए जाते हैं। इनका नाम चित्रांगद इसलिए है क्योंकि आख्यानों के मुताबिक अर्जुन की पत्नी चित्रांगदा मणिपुर की ही सुंदरी थीं।

इधर कुछ वनस्पतिजात का दुर्लभ संग्रहण भी किया गया है। उत्तरांचल से पैरानेटासिया परिवार की, महाराष्ट्र से एपोसाइनासिया परिवार की और सिक्किम से एरिकासिया परिवार की दुर्लभ, संकटापन्न और लुप्तप्राय टेरिडोफाइटिक प्रजातियों को संग्रहीत किया गया है। इन वनस्पतियों को उत्तरांचल से 93 साल बाद, महाराष्ट्र से 50 साल बाद और सिक्किम से 30 साल बाद इकट्ठा किया गया है। खुशी की बात है कि इस साल कुछ नई किस्मों की खोज और पहचान की गई है। सवा सौ एरोमैटिक पौधों और कॉस्मेटिक्स के लिहाज से महत्वपूर्ण पौधों के टैक्सोनॉमिक अध्ययन भी पूरे किए गए हैं।

शांति, सुरक्षा और पर्यावरणीय विकास का आकांक्षी हमारा देश ओजोन प्रकोष्ठ की स्थापना करके ओजोन परत के संरक्षण की कटिबद्धता पहले ही जता चुका है। ओजोन परत को नुकसान पहुंचाने वाले पदार्थों को चरणबद्ध तरीके से खत्म करने के प्रयास भी ओजोन प्रकोष्ठ से संबंधित हैं। ध्यान देने वाली बात है कि रेफ्रीजिरेटर, ऐरोसॉल स्प्रे और अग्निशमन यंत्रों में इस्तेमाल की जाने वाली क्लोरो फ्लोरो कार्बन (सी एफ सी) ओजोन परत को नुकसान पहुंचाती है। ओजोन परत सूर्य के खतरनाक पराबैंगनी विकिरण से पृथ्वीवासियों की रक्षा करती है।

जीवजंतुओं की बात करें तो काजीरंगा के गैंडे, बतख, गीज, पेलिकन और सारस, कच्छ के रण के जंगली गधे, फ्लेमिंगों, सितारों वाले कछुए, मरुस्थलीय लोमड़ियां और सोनितपुर, मयूरझरना, धनश्री, नीलगिरी और अनामुडी के हाथी हमारी जैव–विविधता के विशाल और जीवंत प्रमाण हैं। बाघों की बात करें तो आज देश के सत्रह राज्यों में 28 बाघ रिजर्व हैं जिनका कुल क्षेत्रफल 37761 वर्ग किमी. है। बाघ रिजर्वों के नेटवर्क में अरुणाचल प्रदेश के पर्वतीय ढलानों, असम और प. बंगाल के भारी वर्षा वाले क्षेत्रों और सुन्दरबन के एस्चुराइन कच्छ वनस्पति इलाकों के अलावा राजस्थान के शुष्क वन और उत्तर प्रदेश व बिहार के हिमालयी फुट हिल्स भी शामिल हैं। बांदीपुर, नागरहोल, कार्बेट, कान्हा, मानस, पेंच, बांधवगढ़, पकुई और नमेरी कुछ जाने–माने बाघ रिजर्व हैं। कान्हा के जंगली बाघ, नंदनकानन के सफेद शेर, गिर के एशियाई शेर और बंगाल के रांयल बंगाल टाइगर तो काफी प्रसिद्ध हैं।

यह सूची बहुत लम्बी है। मध्य प्रदेश की टूटी सफेद धारियों वाली चीतल (एक्सिस एक्सिस) और गुजरात के साँभर और नीलगाय प्रकृति के खूबसूरत और नायाब तोहफे हैं। एड्ज से लौटते बारहसिंघों या भुज की पेलिकन का नजारा भारत के प्राकृतिक सौंदर्य का अनमोल मोती है। शांत घाटी, टॉप स्लिप और पेरम्बिशेलम को संजोकर रखने वाला अन्नामलाई अंचल शोला वन की जैव–विविधता को अपने आंचल में समेटे हुए है। लेकिन जरूरत सूची की लम्बाई देखने की बजाय सूची के संरक्षण की है।

अपने प्राकृतिक प्रवास में विचरण कर रहे सांबर डियर, हरे–भरे जंगलों में सांस ले रहे अजगर (पाईथान मोलरस), फुमडी वनस्पतियों पर निर्भर मणिपुर के संगाई हिरन और हिमाचल प्रदेश का नीले, हरे और सुनहरे रंग का राज्यपक्षी मोनाल भारत के अद्वितीय पारिस्थितिक तंत्र की मन मोह लेने वाली अनमोल धरोहरें हैं। राजस्थान के मरुस्थलों में पाए जाने वाले काले और सफेद रंग के भारतीय बस्टर्ड (एरडिओटिस निगरिसिप्स) या नुकीली और लंबी सींगों वाले चिंकारा (गजेला–गजेला) कम खूबसूरत नहीं है। अलग–अलग पारि–प्रणालियों के विशिष्ट जीव–जंतु भी प्राकृतिक विविधता को ही दर्शाते हैं। मसलन, झाड़ पारि–पद्धति में एड्जुटेंट स्टार्क नामक पक्षी की लंबी टांग, खूबसूरत नुकीली और लम्बी चोंच या उसकी पीली गर्दन देखते ही बनती है। इसी से मिलता–जुलता पक्षी लेस्सर एड्जुटेंट स्टॉर्क है जो वन पारि–प्रणाली में पाया जाता है।

चिड़ियों के संरक्षण के लिए भारत में केंद्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण प्रयासरत है। इसका प्रमुख उद्देश्य भारतीय चिड़ियाघरों के जीव–जंतुओं के रखरखाव और देखभाल के मानदंडों को लागू करना है। ऐसे 51 मानक और मापदंड तैयार किए गए हैं जिनका चिड़ियाघरों द्वारा अनुपालन करना निर्धारित किया गया है। इन मापदंडों में पशुओं की आवास–व्यवस्था, चिकित्सा सुविधा, साफ सफाई, भोजन–व्यवस्था या पशुओं की समग्र रूप से देखभाल वगैरह शमिल हैं। इसके अलावा चिड़ियाघर में प्रशिक्षित कार्मिकों या विजिटर सुविधाओं पर भी ध्यान दिया जाता है। 1992 में राष्ट्रीय चिड़ियाघर नीति बनी। देश की समृद्ध जैव–विविधता का संरक्षण इसके प्रमुख लक्ष्यों में से एक है।

चिड़ियाघरों का वर्गीकरण करने और उन्हें मान्यता देने की भी एक वैज्ञानिक व्यवस्था है। चिड़ियाघरों को वहां मौजूद पशुओं, प्रजातियों की संख्या और प्रदर्शित की जा रही संकटापन्न प्रजातियों की संख्या के आधार पर चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है। ये चार श्रेणियां हैं बड़े, मध्यम, छोटे और लघु चिड़ियाघर, लेकिन इन चिड़ियाघरों में संकटापन्न प्रजातियों के संरक्षण हेतु उनके समन्वित प्रजनन की अच्छी व्यवस्था करनी भी जरूरी हैं। हालांकि कुछ जगहों पर ऐसा हो भी रहा है। मसलन दार्जिलिंग चिड़ियाघर में स्नो लियोपार्ड और रेड पांडा के लिए और जूनागढ़ में एशियाई शेर के लिए संरक्षण प्रजनन कार्यक्रम चल रहे हैं। इसके अलावा चेन्नई में सिंहपुच्छ बंदरों और गुवाहाटी या हिमाचल प्रदेश के

तालिका 1 : मान्यता प्राप्त चिड़ियाघरों की संख्या

क्रम संख्या	श्रेणी	प्राप्त आवेदन	मौजूदा चिड़ियाघर / मूल्यांकित	मान्यता प्राप्त	मान्यता रद्द या अमान्यता प्राप्त
1.	बड़े	19	19	19	–
2.	मध्यम	12	12	12	–
3.	छोटे	27	27	27	–
4.	लघु	360	284	101	183
5.	कुल	418	342	159	183

पश्चिमी ट्रैगोपान में पिगमी सुअर वगैरह के प्रजनन पर भी ध्यान दिया जा रहा है।

ताजी जानकारी के मुताबिक केंद्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण को कुल 418 आवेदन प्राप्त हुए। इनमें से 382 आवेदनों में चिड़ियाघर संबंधी जरूरी अर्हताएं मौजूद थीं। जिन चिड़ियाघरों का मूल्यांकन किया गया और मान्यता दी गई, उनका विवरण तालिका–एक में है। जिन 183 चिड़ियाघरों को मान्यता नहीं दी गई उनमें 92 चिड़ियाघर (डियर पार्क और मोबाइल चिड़ियाघर) पहले ही बंद किए जा चुके हैं।

वर्ष 2003 में वन्यजीव सुरक्षा कानून में सुधार के बाद बचाव केंद्रों या सर्कसों को भी चिड़ियाघर की परिभाषा के तहत लाया गया है। कुल 57 बचाव केंद्रों और 26 सर्कसों द्वारा मान्यता पाने के लिए आवेदन भी किया गया है। इसके अलावा चौदह चिड़ियाघरों ने मौजूदा क्षेत्र में अपना आधार व्यापक किया है या फिर वे दूसरे वैकल्पिक और बड़े स्तर के प्राकृतिक क्षेत्रों में पलायन कर गए हैं। इनके पास आवास की पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी और ये बहुत छोटे क्षेत्रों में काम कर रहे थे।

लेकिन इतनी बातों या वर्णनों का सार या उद्देश्य क्या है? क्या जंगलों, झीलों, नदियों, तालाबों, पर्वतों, जीव–जंतुओं, पेड़–पौधों या रेगिस्तानों में एक आपसी वैज्ञानिक संबंध नहीं है? जैव–विविधता का संरक्षण वनों को बढ़ाने और हरियाली को बचाने से गुंथा–बिंधा है। हरियाली की रक्षा करके ही पर्यावरण को सुरक्षित रखा जा सकता है। खेत–खलिहानों से लेकर बाग–बगीचों तक या जंगलों से लेकर गांवों तक फैली हरियाली की अनुपम छटा एक–एक आदमी से देखभाल की मांग करती है। देश की एक तिहाई जमीन पर वन रखने का लक्ष्य अभी हम हासिल नहीं कर पाए हैं। हमारे देश में आर्किड की तकरीबन बारह सौ प्रजातियां पाई जाती है। इनमें पतझड़ी वनों की सुंदर ग्राउंड आर्किड पेक्टेलिस जिगनाटा समेत एक से बढ़कर एक खूबसूरत किस्में शामिल हैं। बारह सौ में से तीन सौ प्रजातियां तो केवल मेघालय में ही पायी जाती हैं। लेकिन प्राकृतिक हरियाली के साथ चाहे–अनचाहे या जाने–अनजाने हुई छेड़छाड़ का ही दुष्परिणाम है कि आज आर्किड की बीस से भी ज्यादा प्रजातियां धीरे–धीरे विलुप्त होती जा रही हैं। इन्हें बचाना जरूरी है। विधि–विधानों, संस्थागत सहायता, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और सरकारी–गैरसरकारी प्रयासों के अलावा धरती के हर मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह पर्यावरण की सुरक्षा के लिए सजग रहे। उसकी रक्षा की हर छोटी–बड़ी कोशिश करे ताकि यह हरियाली बची रहे और बनी रहे।

प्रदूषण हमारी हरियाली को कम नुकसान नहीं पहुंचा रहा है। पेस्टिसाइड्स, डिटर्जेंट्स, रासायनिक उर्वरकों, अकार्बनिक रसायनों या खनिजों, प्लास्टिकों या रबर, रंग या रोगन के वार्निशों ने प्रदूषण को बढ़ाया है। इससे वायु, जल या जमीन भी दूषित हुई है। वायु गुणवत्ता के आंकड़ों पर ध्यान देते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने विभिन्न निर्णयों में दिल्ली के बराबर या उससे ज्यादा प्रदूषित शहरों के रूप में सोलह शहरों को अधिसूचित किया है। यह खतरे की घंटी है। इन शहरों के नाम हैं– हैदराबाद, पटना, अहमदाबाद, फरीदाबाद, झरिया, बंगलौर, पुणे, मुंबई, शोलापुर, जोधपुर, चेन्नई, आगरा, कानपुर, लखनऊ, वाराणसी और कोलकाता। सरकार का यह कदम काबिले तारीफ है कि इन शहरों की वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए कार्य योजनाएं तैयार कर ली गई हैं। वाहन ईंधन

एजेंडा – 21, क्योटो और मांट्रियल प्रोटोकॉल, पृथ्वी सम्मेलन, कार्टाजेना प्रोटोकॉल या वैश्विक पर्यावरण सुविधा जैसी चीजों को देखकर यह बचकाना निष्कर्ष नहीं निकाल लेना चाहिए कि विकसित पश्चिमी देश तीसरी दुनिया की बड़ी चिंता करते हैं। पश्चिमी देश पर्यावरण के प्रति कितने सजग हैं, इसका अनुमान वायुमंडल में उनके द्वारा छोड़ी जा रही खतरनाक गैसों या समुद्र में उनके द्वारा उत्सर्जित रासायनिक प्रदूषकों से ही नहीं लगता। तमाम अंतरिक्ष अभियानों की वजह से पैदा हुई अंतरिक्ष प्रदूषण की हालत के लिए भी ज्यादातर पश्चिमी 'उन्नत' देश ही जिम्मेदार हैं।

जीवजंतुओं और पौधों की कुछ प्रजातियां संरक्षण और देखभाल की मांग कर रही हैं। ट्रेचीपिचिकस गीई एक ऐसा ही लंगूर है। यह सुनहरा होता है और आम बंदरों या लंगूरों से थोड़ा अलग भी। उंगलियों के आकार जैसे खुरदुरे आधारों पर चमक रही एक्रोपोरा इंटरमीडिया एक खूबसूरत मूंगा प्रजाति है जिसे बचाए जाने की जरूरत है। संरक्षण की दरकार तो पेंगोलिन को भी है। तनिक भी खतरे की आशंका होने पर पेंगोलिन गोल–गोल घूमकर कुंडली मुद्रा में आ जाते हैं। न्यूराकेंथम स्फेरोस्टैकिअस चौड़े हरे पत्तों और नीले–बैंगनी फूलों वाली एक संकटापन्न वनस्पति प्रजाति है। और हां, कच्छ वनस्पति फोयनिक्स पालूडोसा या औषधीय पौधा टैक्सस बक्कांटा भी देखभाल की मांग कर रहे हैं। पतली, कड़ी और नुकीली पत्तियों तथा लाल फूलों–फलों वाला टैक्सस बक्कांटा दवाइयों के लिहाज से बेहद महत्वपूर्ण है।

नीति पर ध्यान दिया गया है और प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों को वित्तीय सहायता भी दी गई है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने वर्ष के दौरान साझे जोखिमपूर्ण अपशिष्ट नाशक संयंत्रों के संबंध में दिशानिर्देशों को अंतिम रूप दे दिया गया है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों के फलस्वरूप इसे वर्ष के दौरान प्रकाशित भी कर दिया गया है। इसके अलावा सरकार ने जल की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना के तहत कुल 34 नदियों को कवर भी किया है।

परिसंकटमय पदार्थों के प्रबंधन के साथ–साथ पर्यावरणीय शिक्षा, जागरूकता और प्रशिक्षण पर भी ध्यान दिया गया है। शायद इसी का परिणाम है कि देश भर में 72000 से भी ज्यादा पारिक्लबों की स्थापना की गई है, प्रत्येक पारिक्लब के लिए वित्तीय सहायता एक हजार रु. प्रति वर्ष से बढ़ाकर ढ़ाई हजार रु. प्रति वर्ष की गई है और वन्यजीवों के तमाम पहलुओं से संबंधित पचास अनुसंधान परियोजनाएं कार्यान्वयन के विभिन्न चरणों में हैं। पर्यावरणीय सूचना प्रणाली (एनविस) अपने काम पर डटी हुई है, वर्ष के दौरान इसने पंद्रह हजार से भी ज्यादा सवालों के जवाब दिए हैं और वेबसाइट ने प्रतिमाह करीब पंद्रह लाख प्रयोक्ताओं का रिकार्ड दर्ज किया है। वानिकी क्षेत्र में बाह्य सहायता प्राप्त परियोजनाएं जारी हैं और देश के सोलह राज्यों में साढ़े चार मिलियन हेक्टेयर से ज्यादा क्षेत्र को कवर करने वाली 33 परियोजनाओं का काम पूरा कर लिया गया है।

लेकिन सरकार भी क्या करे? भारत एक बड़ा लोकतंत्र है। शिक्षा का स्तर काफी कम है। गरीबी, बेरोजगारी ज्यादा है। इसके अलावा ढेर सारी विविधताएं मौजूद होने के कारण पर्यावरण के संबंध में पूरे देश के लिए एक जैसी नीति नहीं बनाई जा सकती। क्षेत्र विशेष की खासियत पर भी ध्यान देना पड़ता है। इसके अलावा जनसंख्या, विकास और पर्यावरण से जुड़े आपसी प्रश्न भी समस्या को हर बार एक नया कोण देते हैं। फिर भी जलवायु परिवर्तन, वनीकरण या जीव जंतु कल्याण को लेकर सरकार ने सजगता का परिचय दिया है। राज्याध्यक्षों द्वारा वन्य जीव जंतुओं की भेंट (उपहार) पर रोक लगाई है और पशुचिकित्सकीय औषधि डिक्लोफेनक के इस्तेमाल को धीरे–धीरे बंद किया जा रहा है। इससे देश में गिद्धों के संरक्षण को बल मिलेगा।

इधर कुछ सालों से गिद्धों की गिरती संख्या समूचे भारतीय उपमहाद्वीप के लिए चिंता का विषय रही है। ऐसा न हो कि रेगिस्तान के शहंशाह रेड हैंडेड वल्चर (सर्कोजिप्स कैल्वस) अतीत की बात हो जायें? जिप्स सहित कई प्रजातियों के गिद्धों का लगातार कम होते जाना पूरे विश्व के लिए चुनौतियां पेश कर रहा है। इसी वजह से सभी तीन जिप्स प्रजातियों को अंतर्राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधन संरक्षण परिसंघ द्वारा अत्यधिक संकटापन्न प्रजातियों के रूप में सूचीबद्ध किया गया है। गिद्धों की संख्या आगे और न गिरे, इसके लिए बंदीगृह प्रजनन प्रक्रिया द्वारा गिद्धों का संरक्षण करने के क्रम में निवारक उपाय किए गए हैं। लेकिन देखभाल की जरूरत सिर्फ गिद्धों को ही नहीं है। भारत में जंगली कुत्ता, माउस डियर, हुलांक गिब्बन या सफेद (बर्फीले) तेंदुए भी देखभाल चाहते हैं। क्या इनका हरियाली की रक्षा से कोई संबंध नहीं?

पर हरियाली की रक्षा कैसे की जाए? अभी ज्यादा दिन नहीं बीते जब सेना ने पंजाब की हरिके झील की सतह पर से जलकुंभी हटाकर 'आपरेशन सहयोग' के तहत इसे जीवनदान दिया था। तकरीबन 41 वर्ग किमी. क्षेत्र में फैली इस झील के सीने पर जलकुंभी अभिशाप की तरह सवार थी। हरिके झील प्रवासी पक्षियों का रास्ता है। इसके अलावा यह तकरीबन 363 प्रजातियों का वासस्थान भी है और 120 प्रजातियों की जनन स्थली भी, सकारात्मक सोच का एक दूसरा उदाहरण मलेशिया के प्रधानमंत्री के नेतृत्व में एक मिनट में एक लाख पेड़ लगाने का है। नई सहस्राब्दी जब चौखट पर थी और करीब पूरा संसार पटाखों, धुओं और प्रदूषणों के बाजार में डूबा हुआ था तब उसी समय मलेशियाई लोगों द्वारा किया गया यह प्रयास वाकई में प्रशंसनीय है। एक प्रकार से यह एक रिकार्ड भी है। विश्व रिकार्ड, इसके पहले यह रिकार्ड ब्राजील के साओ पाउलो शहर के नाम था जहां 1976 में एक सप्ताह में करीब ढाई हजार पेड़

बंगाल की खाड़ी में स्थित 572 द्वीपों का समूह (अंडमान और निकोबार द्वीप समूह) तो जैव–विविधता से भरा पड़ा है। यह ठीक है कि आबादी वाले द्वीपों की तादाद यहां चालीस से भी कम है लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि बाकी द्वीपों पर जैव–विविधता ही नहीं है। सभी स्थलीय और समुद्री स्तनपायी प्रजातियों में से 32 तो ऐसी हैं जो यहीं क्षेत्र विशेष में ही पायी जाती हैं। कशेरुकी जंतुओं में डॉल्फिन, व्हेल, ड्यूगॉग, खारे पानी के घड़ियाल या समुद्री कछुए और साँप तो महज कुछ बानगियां भर हैं। पूर्वी तट पर झब्बेदार या फ्रिजिंग किस्म के और पश्चिमी तट पर अवरोधी या बैरियर किस्म के प्रवाल गौरतलब हैं। पानी में पसरी अंडमान की रुटांड प्रवालभित्ति की तो बात ही निराली है! इसके अलावा शोम्पेन, जरवा और सेंटीनली जैसे मानव निवासी भी ख्याल रखे जाने की जरूरत को बड़ी गहराई से रेखांकित करते हैं।

लगाए गए थे। जाहिर है कि हरियाली को बनाना और बचाना आसान नहीं है।

लेकिन आपरेशन सहयोग या वृक्षारोपण अभियान ही दो उदाहरण नहीं हैं जिनसे हरियाली बचाई या बढ़ाई जा सके। तरीके और भी हैं। मसलन–हिमालय की ऊंची पहाड़ियों पर भारत–चीन सीमा के नजदीक दुर्लभ कस्तूरी हिरनों के शिकार को रोकने के लिए चलाया गया 'आपरेशन मृग' नामक अभियान या फिर पंचायती राज संस्थाओं को समेटता हुआ हिमाचल प्रदेश का 'परिश्रम हमारा, वन हमारा' कार्यक्रम। इसके अलावा तराई आर्क योजना भी गौरतलब है। यह विश्व वन्य जीव संघ द्वारा तराई क्षेत्र में बड़े और जंगली स्तनपायियों (हाथी, गैंडा वगैरह) के प्राकृतिक गलियारों को महफूज रखने का एक प्रयास है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम, अन्तर्राष्ट्रीय जैव कार्यक्रम या वर्ल्ड वाइल्ड लाइफ फंड कुछ दूसरी कोशिशें हैं। जरूरत इनसे प्रेरणा लेने की है।

कुछ चेतावनी भी सामने हैं। पेड़–पौधों की ओर देखें तो जिम्नोस्पर्म कुल के गिकगों बाइलोवा और वेलविस्चिपा के कुछ गिनती के पौधे ही दुनिया में बचे हैं। इसके अलावा करीब बीस तरह के भारतीय वृक्ष संकटग्रस्त श्रेणी में आ गए हैं। इनमें से रोडोडेंड्रान डलहौजिया नामक पहाड़ी पेड़ भी है। यह अपने सुंदर लाल फूलों के लिए बहुत प्रसिद्ध है। जाहिर है कि वानस्पतिक संरक्षण के लिए जीन बैंक, जर्मप्लाज्म बैंक, ऊतक संवर्द्धन और पादक अभयारण्य– सभी पर ध्यान देने की सख्त जरूरत है। इसके अलावा रेडियोधर्मी प्रदूषण, भू–प्रदूषण, रासायनिक प्रदूषण, या जल प्रदूषण, से भी निपटने की जरूरत है। क्लोराइड या सल्फाइड जैसे औद्योगिक प्रदूषकों, कीटनाशियों या रासायनिक उर्वरकों जैसे कृषि जात प्रदूषकों और सल्फेट या नाइट्रेट आयनों जैसे नगरीय प्रदूषकों के चलते पानी की स्वच्छता पर नकारात्मक असर पड़ा है। हमें ध्यान रखना होगा कि पानी बचाकर ही हम पानीदार रह सकते हैं। महानगरों में जो गंदा पानी निकलता है, उसकी मात्रा पानी के शोधन संयंत्रों की सकल शोधन क्षमता से ज्यादा ही होती है।

पर्यावरण की रक्षा के लिए प्रयासरत पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के योजना समन्वय और बजट की बात भी जानना जरूरी है। जहां नौवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान कुल योजना व्यय करीब 2945 करोड़ रुपये का था, वहीं दसवीं योजना में मंत्रालय को 5945 करोड़ रुपये की राशि आबंटित की गई थी। वार्षिक योजना 2006–07 के लिए करीब 1339 करोड़ रुपये का परिव्यय आबंटित किया गया है। ताजे आंकड़ों के मुताबिक इसमें से लगभग 213 करोड़ रुपये पर्यावरण से, 435 करोड़ रुपये राष्ट्रीय नदी संरक्षण निदेशालय से, करीब 316 करोड़ रुपये वन और वन्यजीव से, 356 करोड़ रुपये राष्ट्रीय वानिकी और पारिस्थितिकीय विकास बोर्ड से और उन्नीस करोड़ रुपये पशु कल्याण से संबंधित हैं। जाहिर है कि सबसे ज्यादा परिव्यय (27 फीसदी) नदियों से संबंधित है।

यह सोचकर मन ही मन खुश हो लेना एक अलग बात है कि आजकल पर्यावरण पर चर्चाएं आम हो गई हैं। पर्यावरण पर होने वाली सभाओं, सेमिनारों या गोष्ठियों की संख्या बढ़ी है। क्षेत्रीय प्रयास तो जारी ही हैं, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग भी इन प्रयासों को बल दे रहा है। लेकिन हकीकत से मुखातिब होना एक बिल्कुल दूसरी बात है। 'पर्यावरण' नामक विषय के इतना आम होने के बावजूद क्या हम पर्यावरणीय चेतना का विकास कर पाए हैं? क्या हम विश्व नमभूमि दिवस या जैव–विविधता दिवस उतने ही उत्साह से मनाते हैं जितने से वैलेन्टाइन डे? ठीक है कि पुलिकट झील की मौसमी विविधता और प्राणिजात संरचना पर अध्ययन हो रहे हैं। लेकिन ये चिल्का, डल और वेंबानद...? और फिर सूख चुका दिल्ली का सूरजकुंड तालाब? मुसहर और डांढ़ी के तालाबों का अट्ट संबंध? हिमाचल प्रदेश में शीत ऋतु के प्रवासी पक्षियों (बार हेडेड हंसों–अंसेर इंडीकंस) का सवाल...? साइबेरियाई सारसों के झुंडों का रास्ता.....? सवाल गंभीर हैं। उलझनें तमाम हैं लेकिन सुलझाना जरूरी है ताकि.....। ताकि यह हरियाली बनी रहे। और बने रहें हम भी। हां, आने वाली पीढ़ियां भी।

1209, तृतीय तल, डा. मुखर्जी नगर, दिल्ली–9

जल को बचाना वर्तमान सदी की आवश्यकता

डी.डी. ओझा

हमारे वैदिक ग्रंथों में उल्लेख मिलता है कि जल ही प्राण है और यह अमृत के समान है। शायद इसीलिए ब्रह्मांड के किसी ग्रह पर जीवन तलाश करने वाले हमारे विद्वान वैज्ञानिक भी सबसे पहले जल को खोजते हैं, चट्टान में जमी बर्फ या मिट्टी में नमी। इसका कारण है कि जहां जल होगा, वहीं जीवन होगा। और जहां जल नहीं होगा, वहां न वनस्पति होगी और न ही जीवन की कोई संभावना। वस्तुतः 'हम हैं' इसलिए कि हमारी धरती पर पानी है, परंतु जब पानी ही नहीं रहेगा तो हम भी कहां रहेंगे, लेकिन इतनी दूरदर्शिता कहां है? शहरों में नल व बोरिंग, कस्बों में कुएं व हैंडपंप, गांवों में तालाब व नाड़ी, जब तक इनमें पानी हैं, हम बेफिक्र होकर इसका उपयोग करते हैं। घरों में, कार्यालयों में, बाग–बगीचों में और गैराजों में अंधाधुंध पानी का उपयोग और दुरूपयोग होता है, यह मानकर कि यह अनंत है। वस्तुतः जल को हम अपने हिस्से की एक ऐसी निधि मानते हैं जिस पर हमारा ही मात्र अधिकार है और हम यह भूल जाते हैं कि यह समूचे समाज की संपदा है। इस पर पशु–पक्षियों और पेड़–पौधों का भी उतना ही हक है जितना हमारा परंतु हममें से अधिकांश लोग दूसरे की प्यास की कीमत पर इसे अपने आनंद के लिए नष्ट कर देते हैं।

जल का गहराता संकट

जल संकट विश्व व्यापक समस्या है परंतु हमारे देश में इस संकट के कारण निम्नवत हैं।

- जनसंख्या की अभूतपूर्व वृद्धि।
- वृक्षों की अंधाधुंध कटाई।
- वर्षा में निरंतर कमी।
- बढ़ता शहरीकरण एवं औद्योगिकीकरण।
- विलासिता एवं भोगवादी प्रवृति में वृद्धि।
- मानव की स्वार्थी प्रवृति एवं जल के प्रति संवेदनहीनता।
- भूजल पर बढ़ती निर्भरता एवं अत्यधिक दोहन।
- परंपरागत जल संग्रहण तकनीकों की उपेक्षा।
- कृषि में बढ़ता जल उपभोग।
- समाज की सरकार पर बढ़ती निर्भरता।
- जल शिक्षा का अभाव।

वाशिंग्टन डी.सी. स्थित वर्ल्डवाच इंस्टीट्यूट द्वारा प्रकाशित सहस्राब्दी अंक के अनुसार इक्कीसवीं शताब्दी में वैसे तो संपूर्ण विश्व में पानी की कमी होगी, परंतु भारत उन देशों में शामिल होगा, जहां पानी की सर्वाधिक कमी महसूस की जायेगी।

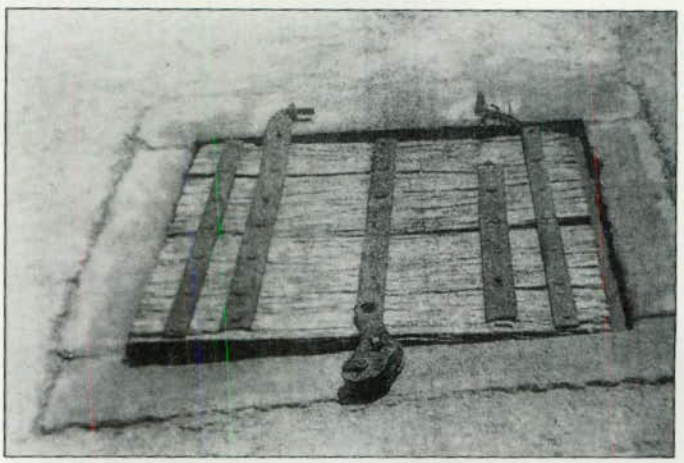

राजस्थान का जल संरक्षण का पारंपरिक जल स्रोत 'कुंड' स्वच्छता का प्रतीक

स्वतंत्रता के बाद देश में प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता, 60 प्रतिशत घट गई है। एक आकलन के अनुसार इस समय प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता 1869 घनमीटर है जो 2025 में घटकर मात्र एक हजार से कुछ अधिक रह जायेगी। वैज्ञानिक भाषा में इसे भीषण जल संकट की स्थिति कह सकते हैं।

ऐसा अनुमान है कि हमारे देश में उपलब्ध भूजल का लगभग 30 प्रतिशत भाग सिंचाई के लिए काम में आता है। देश के अधिकतर भाग में भूजल का अत्यधिक दोहन हो रहा है। सबसे चिंतनीय स्थिति आंध्र प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, गुजरात, पश्चिमी उत्तर प्रदेश एवं मध्य प्रदेश राज्यों की हैं।

हमारे देश की सभी प्रमुख नदियां प्रदूषित अवस्था में हैं तथा उनकी भू अपरदन की दर भी अन्य देशों की अपेक्षा अधिक है। भूमि अपरदन के कारण मृदा की ऊपरी उर्वर परत बहकर सागर में मिल जाती है, जिससे नदियों तथा समुद्र की गहराई भी कम होने लगती है।

हमारे देश के कई भागों में सूखे एवं अकाल की भी विभीषिका है। एक आकलन के अनुसार देश में दस लाख कि.मी. क्षेत्र सूखा प्रभावित हैं, जो निम्नलिखित क्षेत्रों में वर्गीकृत हैं।

- राजस्थान, गुजरात, पंजाब के निकटवर्ती भाग, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश एवं मध्य प्रदेश।

- मध्य महाराष्ट्र, आंतरिक कर्नाटक, दक्षिणी आंध्र प्रदेश तथा तमिलनाडु के कुछ भाग।
- उत्तर – पश्चिमी बिहार, झारखंड के कुछ भाग तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश के कुछ भाग।
- पश्चिमी बंगाल से लगे उड़ीसा के कुछ भागों में सूखा

राजस्थान का परंपरागत जल स्रोत 'नाड़ी'

जहां एक ओर जलवायुवीय दशाओं पर निर्भर करता है वहीं दूसरी ओर मानवीय कारक भी इसके लिए उत्तरदायी माने जाते हैं। विकास की दौड़ में अविवेकी मानव तीव्र गति से वनोन्मूलन कर रहा है। दूसरी तरफ अनियंत्रित पशुचारण एवं तीव्र गति से बढ़ते रेगिस्तान ने भी सूखे की समस्या का विस्तार किया है।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी समस्या

आज विश्व में जल रूपी प्राकृतिक संसाधन एक ऐसा मुद्दा होता जा रहा है, जो देशों के आपसी संबंधों में दरार डाल रहा है। सैनिक युद्ध और गोरिल्ला युद्ध तो चलते ही रहते हैं, परंतु लगभग 300 अंतर्राष्ट्रीय नदियों के किनारे बसे अधिकतर देशों में पानी के उपयोग एवं बंटवारे को लेकर विवाद गंभीर रूप धारण कर रहे हैं।

मध्यपूर्व में यहुदियों, फिलीस्तीनियों तथा जार्डन के बीच केवल धर्म की लड़ाई ही नहीं है वरन् पानी का उपयोग भी एक मुद्दा है। अमेरिका के पश्चिमी क्षेत्र के राज्यों में कोलोराडो तथा अन्य नदियों का विवाद तथा फिलट नदी से संबंधित फ्लोरिडा तथा जार्जिया राज्यों में विवाद चर्चित रहा है।

विश्व के 80 देशों में पानी की कमी है परंतु मध्यपूर्व, उत्तरी अफ्रीका, केन्द्रीय एवं सहारा तथा अफ्रीकी देशों में यह समस्या अधिक गंभीर है। जल की उपलब्धता की दृष्टि से सबसे खराब स्थिति कुवैत की है, जहां प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष मात्र दस घनमीटर जल ही उपलब्ध है। एक गणना के अनुसार विश्व में लगभग 12 हजार घन कि.मी. प्रदूषित जल है। यह मात्रा विश्व के दस सबसे बड़े नदी बेसिनों में उपस्थित जल से भी अधिक हैं।

जल की गुणवत्ता की दृष्टि से बेल्जियम सबसे नीचे है। इसके बाद मोरक्को, भारत, जार्डन, सूडान, नाइजर, अफ्रीकी गणराज्य एवं खांडा आते हैं। जल गुणवत्ता की दृष्टि से फिनलैंड, कनाडा, न्यूजीलैंड, ब्रिटेन, जापान, नार्वे, रूस, कोरिया गणराज्य, स्वीडन, फ्रांस व अमेरिका के कुछ भाग की स्थिति ठीक है।

अतः यह पूर्ण रूप से स्पष्ट है कि जल संरक्षण एवं जल संचयन आज की ज्वलंत आवश्यकता है और समय आ चुका है कि हमें इस ओर तत्काल प्रभावी कदम उठाना चाहिए।

जल संचयन/संरक्षण समय की मांग

आज माना जा रहा है कि बहुत से लोग पानी बचाने की इच्छा रखते हुए भी कुछ विशेष नहीं कर पाते हैं। शायद इसलिए कि पानी बचाने के तौर तरीकों के बारे में हमारी जानकारी उतनी नहीं

पानी के उपयोग का अपना तरीका बदलें

ज्यादातर हम करते हैं	हमें करना चाहिए	बचेगा
फव्वारे से स्नान करने पर 180 लीटर	बालटी में पानी लेकर स्नान करने पर (खर्च होगा 18 लीटर)	162 लीटर
नल खोलकर टब से स्नान करने पर 25 लीटर	बालटी से स्नान करने पर (खर्च होगा 18 लीटर)	7 लीटर
शौचालय में फ्लश टैंक के उपयोग से 20 लीटर	शौचालय में छोटी बालटी के उपयोग से (खर्च होगा 5 लीटर)	15 लीटर
नल खोलकर शेव करने पर 10 लीटर	मग में पानी लेकर शेव करने से (खर्च होगा 1 लीटर)	9 लीटर
नल खोलकर दंत मंजन करने से 10 लीटर	दंत मंजन मग या लोटे से करने पर (खर्च होगा 1 लीटर)	9 लीटर
नल खोलकर कपड़ों की धुलाई करने से 116 लीटर	बालटी से कपड़े धोने पर (खर्च होगा 18 लीटर)	98 लीटर
नल द्वारा वाहन धोने पर 25 लीटर	गीले कपड़े से पोंछने पर (खर्च होगा 18 लीटर)	7 लीटर
पाइप से फर्श की सफाई करने पर 50 लीटर (15X10 फीट पर)	बालटी में पानी भरकर पोंछा लगाने से (खर्च होगा 10 लीटर)	40 लीटर।

** नल से लगातार प्रति सेकंड एक बूँद पानी टपकता रहे तो दिन भर में 17 लीटर पानी व्यर्थ बह जाता है।*

है, जितनी हमें जरूरत है। परंतु थोड़े से प्रयास से हम अपना और समाज का भला कर सकते हैं। यह इसलिए भी जरूरी है कि भीषण जल संकट की चपेट में आए हमारे प्रदेशों में जितना भी जल उपलब्ध है, वह और अधिक समय तक लोगों को उपलब्ध रहे।

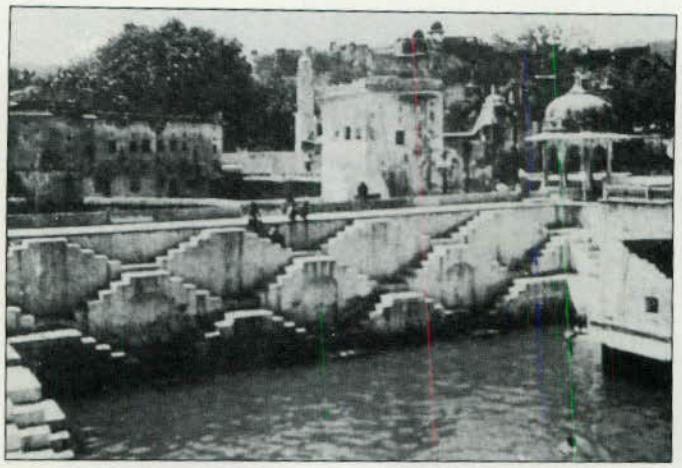

राजस्थान का परंपरागत जल स्रोत 'झालरा'

घरेलू स्तर पर जल संरक्षण

यदि हम अपने दैनिक जीवन के क्रिया–कलापों की ओर दृष्टिपात करें तो हमें स्वतः ही ज्ञात हो जाऐगा कि छोटी सी असावधानी से कितना अधिक जल का नुकसान होता है और अब नुकसान या जल के अपव्यय करने की हमारी आदत सी बन गई है। आज हमने दैनिक जीवन में ऐसी आदतें डाल रखी है जिसके कारण हम जल का अत्यधिक उपयोग करते हैं। परंतु यदि हम मात्र हमारी आदतों में परिवर्तन कर लें तो निश्चय ही इस प्रकृति प्रदत्त स्रोत को बचाने में सार्थक हो सकते हैं।

कृषि में जल संरक्षण

वस्तुतः कृषि ऐसा क्षेत्र है जहां पानी का सर्वाधिक उपयोग होता है। सिंचाई करते समय अत्यधिक पानी व्यर्थ चला जाता है। इनमें मुख्य हानि वाष्पीकरण तथा पौधों द्वारा वाष्पोत्सर्जन के कारण होती है। अतः उन्नत कृषि प्रक्रियाओं को अपनाकर इस क्षति को कम किया जा सकता है जैसे बूंद–बूंद सिंचाई अथवा फव्वारा सिंचाई आदि से इसी प्रकार सामान्य तौर पर ढलवां जमीन पर कृषि होती है। परंतु ढलान के कारण वर्षा के समय पानी बड़े तेज बहावों से ढलान पर बहता है और अपने साथ उपजाऊ मृदा को भी बहा ले जाता है। ऐसी स्थिति में कृषि उत्पादन प्राप्त करने हेतु समोच्च रेखाओं में कृषि करने से पानी का वेग कम हो जाता है। किसानों को चाहिए कि ऐसी फसल किस्मों की बुवाई करें, जिनमें कम पानी की आवश्यकता हो। इसके अलावा इन बिंदुओं पर भी ध्यान देना चाहिए।

- लॉन में पानी सूर्योदय से पूर्व या सूर्यास्त के बाद ही डालें जिससे पानी का वाष्पीकरण रुक सके।
- पानी बचाने के लिए सूखे पत्ते पौधों के पास डालें जिससे वाष्पीकरण रुक सके।
- जिस पानी से सब्जियां, फल आदि धोएं उसे फेंके नहीं, किसी बर्तन में भरकर रख ले। इस पानी का उपयोग पेड़–पौधों में डालने हेतु करना चाहिए।
- खरपतवारों को तुरंत उखाड़ कर फेंकना चाहिए अथवा उसकी बढ़वार रोकने हेतु स्प्रे करना चाहिए।
- घर की रसोई की नालियां इस प्रकार बनायें कि रसोई का पानी सीधा ही बगीचे में जाए।
- वर्ष में एक ही बार पूरे बगीचे की गुड़ाई करे। इससे पानी इधर–उधर बहने के बजाए सीधे जड़ों तक ही जायेगा।
- मौसम के अनुसार अपने बगीचे की सिंचाई करें। गरमियों में प्रतिदिन तथा सरदियों में हर चौथे दिन पानी देवे।
- मछलियों का टैंक खाली करते समय इस पानी का उपयोग लॉन में करे। यह पानी पोषक तत्वों युक्त होता है।
- लॉन में घास की मात्रा कम कर वहां पौधे या फिर पत्थरों से अच्छा लैंडस्केप बनावें। इससे छाया रहेगी एवं पानी का वाष्पीकरण भी कम होगा।

जल संचयन के महत्वपूर्ण बिन्दु

- जल भरने से पूर्व भरे जानेवाले बरतन को अच्छी तरह से साफ करना चाहिए।
- आयुर्वेदाचार्यों के अनुसार, तांबे के पात्र में रखा जल विकृत नहीं होता है। अतः जहां तक संभव हो, पीने के पानी को ऐसे पात्र में रखना चाहिए। तांबा जीवाणुनाशक होने के कारण जल को शुद्ध रखने में सहायक होता है।
- कुएं, हौज व बावड़ी में क्लोरीन या लाल दवा समय–समय पर डालनी चाहिए।
- नालियों तथा गटर लाइनों को जल स्रोतों से दूर रखना चाहिए।
- तालाब का पानी पीने के काम में लेना हो तो उसे उबालकर, ठंडा करके तथा छानकर उपयोग में लेना चाहिए।
- रिसते हुए नलों का समुचित रख–रखाव करना चाहिए तथा घरों एवं सार्वजनिक स्थानों पर टैंक भरते ही टोंटी बंद कर देनी चाहिए।
- जलदाय विभाग की जलापूर्ति हेतु पाइप लाइन के टूट जाने पर समीपस्थ कार्यालय में मरम्मत हेतु तुरंत सूचना देनी चाहिए।
- प्रायः यह देखा गया है कि लोग हैंडपंप से पानी लेते समय भी ध्यान नहीं रखते हैं, जिसके कारण वे कई बीमारियों के

शिकार हो जाते हैं। हैंडपंप का प्लेटफार्म आदि स्वच्छ रखना चाहिए।

- घरों में लगी टोंटियों, वाशबेसिन में लगी टोंटियों के वाशर नियमित रूप से प्रत्येक तीन माह बाद बदलने चाहिए।
- फ्लश शौचालय में कम पानी के उपयोग वाली सुविधा को अपनाना चाहिए।
- जल के संग्रहण एवं दुरुपयोग को बचाने हेतु जनमानस एवं विद्यार्थी वर्ग में चेतना जाग्रत् करनी चाहिए व पोस्टर तथा संचार माध्यमों का उपयोग करना चाहिए। बच्चों को शुरुआत से ही जल के किफायती उपयोग की शिक्षा देना वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बहुत आवश्यक है।

पारंपरिक जल संरक्षण पद्धतियां आज भी प्रासंगिक : उनका अनुरक्षण जरूरी

हमारे देश में भौगोलिक विविधता के अनुसार विभिन्न पारिस्थितिकीय क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न प्रकार के पारंपरिक जल स्रोत एवं संरक्षण पद्धतियां मिलती हैं। यथा राजस्थान में खडीन, कुंड, नाड़ी और बावड़ी, महाराष्ट्र में बंधारा और ताल, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश में बंधी, बिहार और झारखंड में आहर और पइन, हिमाचल में कुहल, तमिलनाडु में इरी, केरल में सुरंगम, जम्मू क्षेत्र के कांडी क्षेत्र में पोखर और कर्नाटक में कट्टा आदि पानी को सहेजने और एक से दूसरी जगह प्रवाहित करने के कुछ अति प्राचीन साधन थे, जो आज भी उपादेय हैं। पारंपरिक व्यवस्थाएं उस क्षेत्र विशेष के परितंत्र और संस्कृति की विशिष्ट देन होती है, जिनमें उनका विकास होता है। वे न केवल काल की कसौटी पर खरी उतरी हैं, वरन् उन्होंने स्थानीय जरूरतों को भी पर्यावरण से तालमेल रखते हुए पूरा किया है।

जल संचयन का सिद्धान्त यह है कि वर्षा के पानी को स्थानीय आवश्यकताओं और भौगोलिक स्थितियों के हिसाब से संचित किया जाए। इस क्रम में भूजल का भंडार भी भरता है। जल संचयन की पारंपरिक प्रणालियों से लोगों की घरेलू और सिंचाई संबंधी जरूरतें पूरी होती रही हैं।

सभी पारंपरिक प्रणालियां छोटी नहीं थी। शहरों की जरूरतों को पूरा करने के लिए बड़ी प्रणालियां भी बनाई जाती थीं। परंतु छोटी प्रणालियों के साथ इनका तालमेल भी होता था, जैसा कि चोल काल (930 – 1200 ई) और मध्यकालीन विजयनगर में दिखता है। ये प्रणालियां इसलिए भी महत्वपूर्ण हैं कि सूखे या अकाल के लंबे दौर में भी इन्होंने समुदायों को जीवनदान दिया है।

देश के सबसे बड़े राज्य राजस्थान में जल संचयन की परंपरागत विधियां उच्च स्तर की हैं। इनके विकास में राज्य की धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यताओं का प्रमुख योगदान है। यहां प्रकृति एवं संस्कृति परस्पर एक–दूसरे से संसाधित रही हैं। जल संचयन की परंपरा यहां के सामाजिक ढांचे से जुड़ी हुई है तथा जल के प्रति धार्मिक दृष्टिकोण के कारण ही प्राकृतिक जल स्रोतों को पूजा जाता है। राजस्थान में स्थापत्य कला के प्रेमी राजा–महाराजाओं तथा सेठ–साहूकारों ने अपने पूर्वजों की स्मृति में अथवा अपने नाम को चिरस्थाई बनाने के उद्देश्य से इस प्रदेश के विभिन्न भागों में कलात्मक बावड़ियों, कुओं, तालाबों, झालरों एवं कुंडों का निर्माण करवाया। राजस्थान में पानी के कई पारंपरिक स्रोत हैं, जैसे नाड़ी, तालाब, जोहड़, बंधा, सागर, समंद एवं सरोवर।

ऊपरी छत से वर्षा जल संरक्षण

हमारे देश में प्रतिवर्ष भू–सतह पर गिरने वाले 4000 घन किलोमीटर जल का आधे से दो तिहाई हिस्सा बेकार बह जाता है। दूसरी तरफ तेजी से बढ़ती जनसंख्या के लिए भूजल का अंधाधुंध दोहन तथा पक्के मकानों, फर्शों व पक्की सड़कों के रूप में फैलता कंक्रीट का जंगल भूगर्भीय जल भंडार के लिए खतरे का संकेत दे रहा है।

भूजल के अत्यधिक दोहन से उत्पन्न हुए गंभीर संकट का मुकाबला करने के लिए देश के कई भागों में वर्षा के पानी के संग्रह की योजना तैयार की गई है। इसके तहत वर्षाकाल में भवनों की छतों से बहने वाले पानी को संग्रहित करने की अनिवार्यता लागू करने के लिए नगरीय नियमों में सरकार संशोधन करने की योजना बना रही है। वस्तुतः ऊपरी छत (रूफ टॉप) से वर्षा जल संग्रहण तकनीक गिरते भूजल को बढ़ाने का प्रभावी कदम है।

चित्र- 2 : छत से बहे हुए वर्षा जल द्वारा भूजल पुनर्भरण

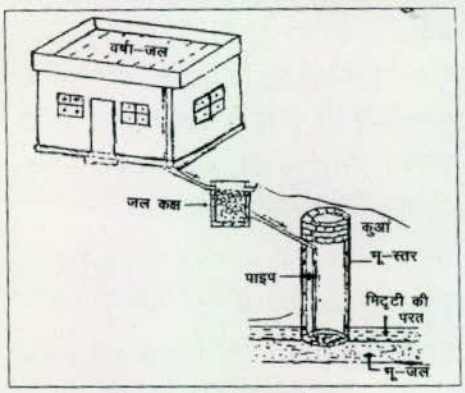

चित्र- 3 : ऊपरी छत से वर्षा जल संग्रहण

आधुनिक युग में भवनों की छत प्रायः आर.सी.सी. आर.बी. सी. की बनाई जाती है जिसमें छत पर एकत्रित होने वाली वर्षा और अन्य जल की निकासी का प्रबंध भली–भांति किया जाता है। कई जगह इसको कुछ निकासी छिद्रों द्वारा नीचे गिरने दिया जाता है और कुछ भवनों से इसे नली के माध्यम से कुएं तक लाया जाता हैं। इस नली का एक किनारा वर्षा जल एकत्रित करने वाले पाइप से बांधा जाता है, तथा दूसरा किनारा कुएं के अंदर सुविधाजनक स्थिति में छोड़ा जाता (चित्र – 2 व 3) है। कुएं में छोड़े जाने वाले सिरे के मुंह पर एक प्लास्टिक की महीन जाली लगाई जाती है जिससे कि अनावश्यक कणों को कुएं में जाने से रोका जा सके। इस विधि को अपनाने से कुओं के जल–स्तर में वृद्धि प्रेक्षित की गई। अतः वर्षा जल को छत से एकत्रित करना भूजल के कृत्रिम पुनर्भरण का प्रभावी कदम है।

छत पर प्राप्त वर्षा जल संचयन के लाभ

- जहां जल की अपर्याप्त आपूर्ति होती है या सतही संसाधन का या तो अभाव है या पर्याप्त नहीं है, वहां यह जल समस्या का आदर्श समाधान है।
- वर्षा जल जीवाणुओं रहित, खनिज पदार्थ की अधिकता से मुक्त तथा हल्का होता है।
- यह बाढ़ जैसी आपदा को कम करता है।
- भूजल गुणवत्ता को, विशेषतौर पर जिसमें फ्लोराइड तथा नाइट्रेट की अधिकता हो, यह द्रवीकरण के द्वारा सुधारता है।
- सीवेज तथा गंदे पानी में उत्पन्न जीवाणु तथा अन्य अशुद्धियों को समाप्त/कम करता है जिससे कि जल पुनः उपयोगी बनता है।
- वर्षा जल के संचयन के लिए यह प्रणाली बहुत सरल, सस्ती एवं पर्यावरण के अनुकूल है।
- शहरी क्षेत्रों में जहां पर शहरी क्रियाकलापों में वृद्धि के कारण भूजल के प्राकृतिक पुनर्भरण में तेजी से कमी आई है तथा कृत्रिम पुनर्भरण उपायों को क्रियान्वित करने के लिए पर्याप्त भूमि उपलब्ध नहीं है, भूजल भंडारण का यह एक उचित विकल्प है।

छत पर प्राप्त वर्षा जल का संचयन कैसे करें?

छत पर प्राप्त, वर्षा जल का भूमि में पुनर्भरण निम्न संरचनाओं द्वारा किया जा सकता है।

- बंद/बेकार पड़े कुएं द्वारा
- बंद पड़े/चालू नलकूप (हैंडपंप) द्वारा
- पुनर्भरण पिट (गड्ढा) द्वारा
- पुनर्भरण खाई द्वारा
- गुरुत्वीय शीर्ष पुनर्भरण कुएं द्वारा एवं
- पुनर्भरण शॉफ्ट द्वारा

इस प्रकार उपर्युक्त तरीकों द्वारा हम जीवन के आहार जल को बचाने में कामयाब हो सकते हैं। वस्तुतः जल संरक्षण प्रत्येक नागरिक का मौलिक कर्त्तव्य है तथा इसमें सरकार की अपेक्षा जन सहभागिता एवं जन की जल के प्रति जागरूकता अत्यंत आवश्यक है।

वैज्ञानिक एवं वरिष्ठ विज्ञान लेखक,
गुरु कृपा, ब्रह्मपुरी, हजारी चबूतरा, जोधपुर–342001

अरुणाचल प्रदेश में एनआरईजीए पर अमल

अरुणाचल प्रदेश में, वर्ष 2006–07 के दौरान राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (एनआरईजीए) शुरू में एक जिले में लागू किया गया था और बाद में मौजूदा वित्तीय वर्ष के दौरान इसके दायरे में 2 और जिलों को शामिल किया गया है। अधिनियम के कार्यान्वयन के पहले वर्ष के दौरान 0.17 लाख परिवारों ने रोजगार की मांग की और सभी को रोजगार उपलब्ध करा दिया गया।

राज्यों में 4.53 लाख श्रम–दिवस का रोजगार उपलब्ध कराया गया। इस प्रकार एक जिले में श्रम–दिवस का औसत 4.53 लाख बैठता है, जबकि राष्ट्रीय औसत 36.47 लाख श्रम–दिवस है। इसमें से 30.02 प्रतिशत का श्रम–दिवस रोजगार महिलाओं को और शत–प्रतिशत श्रम–दिवस का रोजगार अनुसूचित जातियों को उपलब्ध कराया गया। रोजगार उपलब्ध कराने के लिए 496 कार्य शुरू किए गए। इसमें से 397 कार्य पूरे हो चुके हैं। एक जिले में शुरू किए गए कार्यों का औसत इस प्रकार 496 बैठता है, जबकि राष्ट्रीय औसत 3581 कार्य हैं। अधिनियम के तहत राज्य के एक जिले में रोजगार प्राप्त परिवारों का औसत 16,926 है, राष्ट्रीय औसत 91,685 परिवार है।

वर्ष 2006–07 के दौरान राज्य के लिए 12.11 करोड़ रुपये जारी किए गए। इसमें से जनवरी, 2007 तक 2.21 करोड़ रुपये का इस्तेमाल हो चुका है, जो कुल उपलब्ध राशि का 18.27 प्रतिशत है।

इस्तेमाल की गई राशि में से 98.90 प्रतिशत राशि मजदूरी पर, सामग्री पर कोई राशि नहीं और 1.09 प्रतिशत राशि प्रशासन पर खर्च की गई। इस प्रकार राज्य के एक जिले में औसत खर्च 2.21 करोड़ रुपये बैठता है, जबकि राष्ट्रीय औसत 35 करोड़ रुपये है।

प्राकृतिक संसाधन और उनका संरक्षण

प्रियंका द्विवेदी

विश्वग्राम के इस युग में पर्यावरण और प्रकृति पर पूरी दुनिया का चिंतित होना एक सुखद पहलू है वरना उपभोक्तावाद में लालच की मिलावट ने न सिर्फ मानवीय रिश्तों में जहर घोला है बल्कि पर्यावरण और पारिस्थितिकीतन्त्र को भी आज अवक्रमण के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है। आज कब अपने किसी चिरपरिचित जीव–जन्तु या फूल–पौधे के संरक्षण की बेतहाशा जरूरत की खबर आ जाए कहना मुश्किल है। समय के बदलाव और वैज्ञानिक प्रगति ने विलुप्त होते जीवों की संख्या में काफी तेजी पैदा कर दी है। इसका परिणाम अब यह है कि भारतीय चिड़ियाघरों में जंगली कुत्ता, माउस डियर, हुलॉक गिब्बन, सफेद तेंदुए आदि जैसी प्रजातियों को भी संरक्षण के लिए नामित किया गया है। ये नामित होने वाली ऐसी प्रजातियां है जिन्हें हम अभी अपने आस–पास देख सकते हैं। लेकिन गिद्धों की तरह ये कब कहानी बनकर 'जटायु' जैसे किरदार बन जायेंगे कहा नहीं जा सकता।

आदिमानव से आधुनिक सभ्य मानव बनने तक के सफर में मनुष्य ने यथा संभव विलासिता और विकास के संसाधन जुटायें। इन संसाधनों के निर्माण में प्रकृति को हरसंभव चुनौती भी दी। लेकिन प्रकृति सब सहन करती गयी। समय–समय पर भूकम्प, सूनामी जैसी आपदाओं से चेताती भी गयी। लेकिन मनुष्य का लोभ कम होने का नाम ही नहीं लेता। यह मनुष्य लोभ ही था जिसके चलते न जाने कितने सीधे–साधे जीव–जन्तु, खूबसूरत महकदार और स्वादिष्ट फल देने वाले पेड़–पौधे काल के गाल में समा गये। इन सबके बावजूद मनुष्य के तरक्की करने और प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की हवस में कमी नहीं आयीं। अब यह बस अभी कितनों को और लीलेगी और कितने अस्तित्व का संघर्ष अभी आगे करेंगे या कर रहे हैं यह भी भविष्य के गर्भ में हैं। लेकिन संरक्षण, संवर्धन के वर्तमान सरकारी, गैर–सरकारी प्रयासों के बावजूद न रुकने वाली इस विभीषिका से किसी भी चिन्तनशील मनुष्य का परेशान होना लाजमी है।

पिछले वर्ष इसी कड़ी में राज्य प्राणिजात शृंखला, प्राणिजात संरक्षण क्षेत्र और नवभूमि पारितंत्र शृंखला जैसे कुछ प्रकाशन निकाले गये। यह प्रकाशन महत्वपूर्ण पारितन्त्र और कुछ चुनिंदा संरक्षण केन्द्रों के संघ राज्य क्षेत्रों में एक सौ एक व्यापक प्राणिजात सर्वेक्षण पर आधारित थे। इनमें से दो महत्वपूर्ण सर्वेक्षणों में तिब्बती जंगली गधे और लद्दाख के हिमालयी

पशुधन का संरक्षण

मारमॉट को शामिल किया गया। इस सर्वेक्षण में 592 प्रजातियों 11,294 परिचित नमूनों को शामिल करके राष्ट्रीय प्राणी सर्वेक्षण के संग्रह को और समृद्ध बनाया गया। साथ ही इसी दौरान टेरोमैलिडै परिवार यूरिटोमिडै परिवार और डैफनीडै परिवार के विभिन्न टैक्सा की नए लजीज व्यंजनों के रूप में खोज की गई। यह सर्वेक्षण मरुस्थल पारितंत्रों, हिमालयी पारितंत्रों, ताजा जल/नवभूमि पारितंत्रों और तटीय/समुद्री पारितंत्रों के अनेक प्राणियों की जातियों के अध्ययन पर आधारित था। जिसके परिणामस्वरूप दक्षिण–पूर्वी समुद्रतट में पुलीकट झील की मौसमी विविधता प्राणिजात संरचना की जानकारी के साथ सात समूहों की कुल 22 प्रजातियों, मोलुस्का की 15 प्रजातियों और मछली की छह प्रजातियों के संरक्षण की आवश्यकता पर बल दिया गया। सरकार पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के जरिए अध्ययन, शोध और जागरूकता जैसे कार्यक्रमों का आयोजन करती है।

पर्यावरण और जैवमंडल को सुरक्षित रखने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का सर्वेक्षण और अन्वेषण समेत संरक्षण, पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन, प्रदूषण की रोकथाम, जल निकायों का संरक्षण, पुनरुद्धार व पारि–विकास, अनुसंधान शिक्षा व जागरूकता फैलोशिप और अवार्ड, पर्यावरणीय सूचना, विधान और संस्थागत सहायता, अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और सतत् विकास, प्रशासन, योजना समन्वय और बजट, सिविल निर्माण जैसे अनेक कार्यक्रमों का संचालन मंत्रालय अपने अधीनस्थ विभागों और गैर–सरकारी संगठनों के माध्यम से संचालित करता है।

इन शोधों के परिमाणस्वरूप नये–नये जीव–जन्तुओं की खोज और उनकी सुरक्षा की गारंटी भी तय की जाती है। आज उसी का परिणाम है कि सरकार नयी–नयी योजनाएं ला रही है। इसी क्रम में जैव–विविधता के संरक्षण से संबंधित विभिन्न मुद्दों से जुड़े दस्तावेजों की समीक्षा, निगरानी और समन्वयन के लिए मंत्रालय द्वारा जैव–विविधता पर एक स्कीम शुरू की गयी। जिसके तहत 17 देशों ने एक ही मत के अति विविधता वाले देशों का एक समूह बनाया। इनमें वे देश शामिल हैं जिनके पास उस समूह की अन्तर्राष्ट्रीय जैव–विविधता का लगभग 70 प्रतिशत भाग है। इसी के साथ ही इसे संयुक्त राष्ट्र संघ और अंतर्राष्ट्रीय मंचों में वार्ता करने के लिए विधिवत एक ब्लॉक के रूप में मान्यता भी प्राप्त है। भारत को 19 फरवरी, 2004 से दो वर्षों की अवधि के लिए एल.एल.एम.सी की अध्यक्षता ग्रहण करने का आमंत्रण भी दिया गया था। जिसके अंतर्गत कार्यकलापों का समन्वय इस मंत्रालय के संरक्षण और सर्वेक्षण प्रभाग द्वारा किया जाता है।

आज कच्छ वनस्पतियों के संरक्षण के लिए मंत्रालय कच्छ वनस्पति और प्रवाल भित्ति समिति द्वारा इनके अद्भुत पारितंत्रों व जैव–विविधता संसाधन आदि के आधार पर की गई अनुशंसा के तहत देश के अभिनिर्धारित क्षेत्रों में इस संरक्षण और प्रबंधन कार्यक्रम को शुरू किया है। इसके अलावा वनस्पति बागानों को तैयार करने, सुरक्षा कैंचमेंट क्षेत्र व्यवहार, सिल्टेशन नियन्त्रण प्रदूषण उपशमन, जैव–विविधता संरक्षण, सतत संसाधन उपयोग, सर्वेक्षण, परिरक्षण, शिक्षा एवं जागरूकता जैसे कार्यकलापों को संचालित करने के लिए प्रबंधन कार्ययोजनाओं (मैप्स) के तहत शत–प्रतिशत वित्तीय सहायता दी जाती है। इन सारे कार्यक्रमों का संचालन मंत्रालय के संरक्षण और सर्वेक्षण प्रभाग द्वारा किया जाता है। पिछले वर्ष कच्छ वनस्पतियों के गहन संरक्षण और प्रबंधन के लिए मंत्रालय ने पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, तमिलनाडु, कर्नाटक, गोवा, गुजरात को नामित कर उन्हें वित्तीय सहयोग दिया।

कच्छ वनस्पतियों के बाद अब शैवालों की ओर बढ़ते हैं। शैवालों की मानवजीवन के स्वास्थ्य और स्वाद जैसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में खासी दखल रहती है। एक ओर जहां ये पर्यावरण को स्वच्छ बनाये रखते हैं वहीं दूसरी ओर लजीज व्यंजनों की सूची मशरूम की सब्जी के बिना अधूरी लगती हैं। इनके लिए सरकार ने 1987 से ही प्रयास आरम्भ कर दिया है। राष्ट्रीय कच्छ वनस्पति और प्रवाल भित्ति समिति की सिफारिश पर मंत्रालय द्वारा अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह, लक्षद्वीप समूह, कच्छ की खाड़ी और मन्नार की खाड़ी को नामित किया गया है। ये क्षेत्र बेहतरीन और उपयोगी शैवालों के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं।

वनस्पतियों का दवा में प्रयोग आज ही नहीं आदिम युग से भी होता आ रहा है। लेकिन बढ़ते औद्योगिकीकरण और प्रदूषण ने आज इनमें भी जहर घोल दिया है। आज उसी का परिणाम है कि आज इनके संरक्षण की जरूरत आन पड़ी है। विभिन्न कार्यकलापों को चलाने और औषधीय वनस्पतियों के संरक्षण में लगे संगठनों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए इस मंत्रालय के संरक्षण और सर्वेक्षण प्रभाग द्वारा इस कार्यक्रम को संचालित व समन्वित किया गया है। इस परियोजना के लिए केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक आंध्र प्रदेश, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, राजस्थान, महाराष्ट्र समेत नौ राज्यों को नामित किया गया है।

इसका लक्ष्य औषधीय वनस्पतियों की वन्य आबादी का संरक्षण करने के लिए नौ परियोजना राज्यों की सहायता करना, देशज स्वास्थ्य सुरक्षा ज्ञान को सशक्त बनाना, स्वास्थ्य एवं आजीविका की सुरक्षा में वृद्धि करने के साथ प्रलेखन और संरक्षण करना है।

इसके लिए हालांकि कानूनी स्तर पर काफी प्रयास किए जा रहे हैं लेकिन इन प्रयासों को फलीभूत होने के लिए सामाजिक दरकार की भी जरूरत है। कानून में जीव जन्तुओं समेत पर्यावरण संरक्षण के लिए, प्राणियों के प्रति क्रूरता निवारण अधिनियम, 1960 (1960 का 59), राष्ट्रीय पर्यावरण न्यायाधिकरण 1995 (1995 का 27), राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्राधिकरण अधिनियम, 1977, भारतीय वन अधिनियम, 1927 (1927 का 16), भारतीय वन अधिनियम, 1927, वन्य जीव (सुरक्षा) अधिनियम, 1972, वन (सुरक्षा) अधिनियम 1980, लोक देयता बीमा अधिनियम, 1991 जैसे प्रावधानों की मान्यता है। आज वन्य जीवों के संरक्षण के लिए चाहे जितने प्रयास हो रहे हों पर सच्चाई बिल्कुल अलग है। कहीं–कहीं तो जीवों का शिकार या उनके प्रति क्रूर व्यवहार इन कानूनों को ठेंगा दिखाते भी नजर आते हैं।

आज पर्यावरण पर मंडराते संकट ने प्रदूषण को भी बढ़ावा दिया है। आज वह प्रदूषण ही है जिसके चलते कई जातियां विलुप्त हो चुकी है, कुछ होने की कगार पर है। यह सभी

वर्ष	कुल वनावरण कवर	प्रतिशत
1989	638,804	19.43
1991	639,364	19.45
1993	639,638	19.45
1995	638,879	19.43
1997	633,397	19.27
1999	637,293	19.39
2001	675,538	20.55
2003	678,333	20.64

आंकड़े 1989–2003 के बीच सारे सरकारी, गैर–सरकारी प्रयासों के परिणाम है। लेकिन इन सोलह वर्षों में देश की जनसंख्या ने काफी तरक्की की। यह सिर्फ मानवीय स्तर पर हुआ। वह भी रोक के बावजूद (भले नैतिकता ही) इसी प्रकार विकास या विनाश के किसी कदम को फलीभूत करने के लिए इसमें आखिरी आदमी ही है। जिसकी किसी समस्या की गम्भीरता का एहसास ही काफी है बाकी सुधार तो वह अपने आप कर लेगा। हाल में देश के कुछ प्रदेशों में जहां दलित आन्दोलन तेज हुए वहां जनसंख्या में कमी भी आयी है। कहने का तात्पर्य है कि जन जागरूकता से समस्यायें अपने आप खत्म हो जाती हैं। भले उसके सकारात्मक नकारात्मक परिणाम दिखें। पर जागरूकता अपने आप में समस्या के हर ताले की चाभी है।

प्रकृति का प्रकोप

क्योंकि इसके पहले सरकार के राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों की चर्चा की जा चुकी है। यह प्रयास कितने असरदार हुए हैं यह भी किसी से छुपा नहीं है। देश की अशिक्षा, गरीबी, सामाजिक जड़ता, पर्यावरण जैसे क्षेत्रों में राष्ट्रीय विकास सहायता देने के लिए कई प्रयास किए है। इनमें अत्यधिक महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों और वर्गीकी कार्य में अन्तरालों की पहचान करने के बाद वर्गीकी क्षेत्र में क्षमता निर्माण के लिए एक अखिल भारतीय परियोजना तैयार की गयी है। इसके अलावा पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण पर पूंजीगत व्यय को बढ़ाया गया है। इस प्रकार भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, भारतीय प्राणि सर्वेक्षण और प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय के लिए भी पूंजीगत कार्यों का संचालन संभव हो सकेगा। इस कार्य में सहयोग देने के लिए अल्मोड़ा, देहरादून, जोधपुर, जबलपुर, भोपाल, दिल्ली, मैसूर, बंगलौर, कोयम्बटूर, यरकौड़, हैदराबाद, शिमला, इलाहाबाद और छिंदवाड़ा में कई कार्यालय भवनों, प्रयोगशालाओं, संग्रहालयों और आवासीय क्वार्टरों का निर्माण पूरा कर लिया गया है। एक वर्ष के दौरान किये गये यह प्रयास सरकार की पर्यावरण के प्रति गम्भीरता को दर्शाते हैं।

इन सबके बावजूद पर्यावरण का संरक्षण हमारे लिए एक चुनौती है। इस समय पर्यावरण पर पड़ रही चौतरफा मार से हमें हमारी सजगता, ईमानदारी और वही मानवीय मूल्य बचा सकते हैं जो हर युग में प्रासंगिक रहे हैं।

एनविस केन्द्रक बिन्दु और इसके सभी हिस्सेदारों ने वर्ष के दौरान 15000 से अधिक प्रश्नों के उत्तर देकर यथासंभव सूचना उपलब्ध कराई। यह संस्था पर्यावरण मंत्रालय के निर्देश पर काम करती है। मंत्रालय पर्यावरणीय सूचना की आवश्यकता को महसूस करते हुए इस मंत्रालय ने एक योजनागत कार्यक्रम के रूप में पर्यावरणीय सूचना, संग्रह मिलान, भंडारण, पुनः प्राप्ति और भिन्न–भिन्न प्रयोक्ताओं, जिनमें नीतिनिर्माता, शोधकर्त्ता, शिक्षाविद् नीतिनियोजक, अनुसंधान वैज्ञानिक आदि को शामिल कर इस कार्यक्रम का विस्तार किया।

वेबसाइट ने प्रतिमाह लगभग 15 लाख प्रयोक्ताओं का रिकार्ड दर्ज किया जो राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय प्रयोक्ताओं द्वारा वेबसाइट के उपयोग की जानकारी देता है। पर्यावरण के क्षेत्र में आज एनविस इस वेबसाइट के जरिए सबसे नयी और आधुनिक सूचना प्रदान करने वाला स्रोत बन गया है।

पिछले वर्ष के दौरान पुस्तकालय ने 25000 पुस्तकों, तकनीकी रिपोर्टों, पत्रिकाओं, कार्यवाहियों आदि के अतिरिक्त, अंग्रेजी और हिन्दी दोनों में विभिन्न प्रकार की सामान्य पुस्तकें प्रकाशित की। विभिन्न संगठनों, संस्थाओं और अन्य व्यावसायिक निकायों ने समय–समय पर पुस्तकालय जाकर अपने लिए आवश्यक सूचना एकत्र की। उपभोक्ताओं के लिए ऑनलाइन एक्सेस की व्यवस्था करने के उद्देश्य से नियमित वर्गीकरण प्रणाली अपनाकर पुस्तकालय के रिकार्डों को कंप्यूटरीकृत किया गया है।

इसके अलावा प्रदूषण गमन के लिए सहायता के अन्तर्गत पर्यावरणीय एवं कानून समेत न्यायाधिकरण की स्थापना की गई है। मंत्रालय के मसौदे पर मांगी गयी टिप्पणियों के जवाब में मिली 500 टिप्पणियां पाठकों के पर्यावरण के प्रति जागरूकता को दर्शाती हैं।

विषयों पर अनभिज्ञता के कारण हमें जरूरत और विकास के मानकों को ढंग से परिभाषित करना होगा। हमें विकास और आवश्यकता की परिभाषा अपने अनुरूप गढ़ने की जरूरत है। क्योंकि आज भी हमारे यहां प्रकृति का एक समृद्धशाली भंडार है जिसे सुरक्षित रखना हमारी जिम्मेदारी है।

सरकार के प्रयासों में ताजमहल के संरक्षण सहित प्रदूषण उपशमन के लिए सहायता और परिसंकृत्मय पदार्थों का प्रबंधन शामिल है। इसके अलावा राज्य सरकारों, राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों, केन्द्रीय/राज्य अनुसन्धान संस्थाओं और अन्य, सरकारी एजेंसियों/संगठनों की तकनीकी क्षमताओं को सुदृढ़ करने में सहायता करना शामिल है। आज वैश्विक तापन से परेशान धरती, प्रकृति के प्रकोप, भूस्खलन, ओजोन परत का क्षरण, बढ़ते रेगिस्तान, भूकम्प आदि से पृथ्वी और मानवता दोनों की रक्षा करना जरूरी है। आज हरियाली प्रकृति की चाहिए, कॉस्मेटिकों की नहीं। यह समय और मानवता की मांग है। एक सभ्य मनुष्य होने के नाते हमारा दायित्व भी है कि हम प्रकृति संरक्षण के हर उस प्रयास को बढ़ावा दें जो अपने स्तर से संभव है।

सुरक्षित जीवों के स्वास्थ्य पर प्रदूषण ने बुरा असर डाला है। इस मामले में वैज्ञानिकों का मानना है कि इसके पीछे इन प्रजातियों के आवासों के परिसीमन में होने वाला व्यापक परिवर्तन है। यह परिवर्तन कई रूपों में मानव समेत जीव जन्तु, पौधें, सूक्ष्म जीव समूहों और इनके गुणों को प्रभावित करता रहा है। बहुद्देशीय परियोजनाएं, औद्योगिकीकरण, प्रौद्योगिकी विकास, सूचना प्रौद्योगिकी और संचार क्रान्ति की विकास प्रक्रिया में मानव ने कई प्रत्यक्ष लाभ प्राप्त किए हैं, वहीं इनसे होने वाली हानियां अब प्रत्यक्ष रूप से जीवों को प्रभावित करने लगी हैं। इसी पर्यावरण प्रदूषण के चलते समुद्र जल स्तर में वृद्धि, ओजोन परत का क्षरण, अम्ल वर्षा और वैश्विक उष्णता जैसी समस्याएं हैं।

इस सन्दर्भ में भारत ने राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर पहल की है। आज उसी का परिणाम है कि भारत ने लगातार अपने वन–भूभाग को बढ़ाया है जो आंकड़ों में साफ है। भारत के राज्यों में पर्यावरण संरक्षण के प्रयास में अच्छी जागरूकता देखने को मिली है। वह राज्य चाहे उत्तर भारत के हों या दक्षिण भारत के। केन्द्र ने सभी राज्यों की यथासंभव सहायता की है। मसलन, केन्द्र द्वारा तमिलनाडु में भूमि और जल संसाधन के लिए "प्राकृतिक संसाधन लेखाकरण" पर एक अनुसंधान परियोजना शुरू की गई है।

सरकार के प्रचार–प्रसार पत्रों का उद्देश्य गैर इकोनामिस्टों को पर्यावरणिक इकोनामिक्स की अवधारणाएं स्पष्ट करना है। पर्यावरणिक एक्टरनेलिटीज, वाइन प्रदूषण नियंत्रण और पर्यावरणिक लेखाकरण पर तीन पत्रों का पहला सेट मुद्रित करने के साथ इसे वेबसाइट में दर्ज भी करा दिया गया है।

पर्यावरण संबंधी कार्यक्रमों को जंगलों, गांवों से निकालकर इसे कालेजों और विश्वविद्यालयों में भी लाने का प्रयास किया गया है। प्राकृतिक संसाधन केन्द्र द्वारा कालेजों और विश्वविद्यालयों के अध्यापकों के लिए पर्यावरणिक इकोनोमिक्स पर एक तीन दिवसीय संकाय उन्नयन कार्यक्रम आर्थिक विकास संस्थान नई दिल्ली में आयोजित किया गया। इसी प्रकार कई अन्य कार्यक्रम भी प्रयासों की दरकार में शामिल है। इसमें पर्यावरणीय सूचना प्रणाली से विधान और संस्थागत सहायता के जरिए कार्यों के सम्पादन का हाथ मजबूत करना होगा।

ज्ञानीपुर, पोस्ट–अधियारी, तहसील–मनकापुर, जिला–गोंडा (उ.प्र.)

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो और उसके साथ मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। कुरुक्षेत्र में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख संपादक, कुरुक्षेत्र कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

मधुमक्खी पालन – आय का स्रोत

सी.जे. जुनेजा

मधुमक्खी पालन एक लघु व्यवसाय है जिससे हमें उत्तम खाद्य पदार्थ, शहद तथा मोम प्राप्त होता है। इसके अलावा इससे पेड़–पौधों के परागण से फसल की पैदावार में भी वृद्धि होती है। खेतीबाड़ी करने वालों के लिए यह एक सस्ता और कम मेहनत वाला परिपूरक धन्धा है। इसे एक व्यवसाय के रूप में अपनाकर अपनी जीविका का मुख्य साधन बनाया जा सकता है। बहुगुणी मधु रक्तवर्धक, रक्तशोधक तथा आयुवर्धक अमृत है। इसका सेवन शरीर को शक्ति एवं स्फूर्ति प्रदान करता है। औषधियों में भी इसका प्रयोग किया जाता है। यह दिल, दिमाग और उदर के विकारों को दूर करने में सहायक होता है। इसे गले की खराबी, सर्दी तथा खांसी के अलावा अमाश्य, टाइफाइड, निमोनिया, मधुमेह तथा नेत्र के रोगों में औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है। मधु घाव को बढ़ने, पकने व सड़ने से रोकता है। धार्मिक कार्यक्रमों तथा पूजा–अर्चना आदि में भी इसका प्रयोग बहुप्रचलित है। मधुमक्खी पालन के व्यवसाय से प्राप्त मोम का प्रयोग क्रीम, मरहम, प्लास्टिक के सामान, स्याही, पालिश, रोगन, वर्निश तथा दवाइयां इत्यादि के बनाने में किया जाता है।

मधुमक्खी अपने आप तथा परिवार को शत्रुओं या अन्य खतरों से बचाने के लिए डंक मारती हैं और इसके विष से शरीर में जलन और सूजन होती है। इस मधुमक्खी विष का प्रयोग चर्मरोग, गठिया और जोड़ों के दर्द जैसे रोगों में प्रयोग किया जाता है। इसके लिए मधुमक्खी को उचित अंग पर कटवाने पर या विष को यंत्रों द्वारा एकत्रित कर दवा के रूप में उपयोग किया जाता है।

शुरू में यह व्यवसाय कम लागत से छोटे पैमाने पर आरम्भ करना चाहिए तथा प्रत्येक मधुमक्खी पालक को निम्नलिखित बातों का ज्ञान होना अति आवश्यक है।

• मधुमक्खी की किस्में

मधुमक्खी की मुख्य रूप से चार किस्में हैं:–

• छोटी मधुमक्खी (एपिस फलोरिया)

यह आकार में सबसे छोटी होती है तथा छोटी–छोटी झाड़ियों और पौधों की नीची डालियों पर हथेली के बराबर एकहरा छत्ता बनाती हैं। इसके छत्ते से प्रतिवर्ष 500 ग्राम से एक कि.ग्रा. तक शहद प्राप्त किया जा सकता है। इनको छेड़ने पर मधुमक्खियां छत्ता छोड़कर भाग जाती हैं तथा भ्रमणशील स्वभाव के कारण इन्हें पालना सम्भव नहीं है।

• सारंग या पहाड़ी मधुमक्खी (एपिड डोरसेटा)

यह आकार में सबसे बड़ी व गुस्से वाली मधुमक्खी होती है। यह खुले स्थानों में जैसे पेड़ की ऊंची डालों पर, ऊंचे मकानों की दीवारों के छज्जों पर तथा पहाड़ की उभरी हुई चट्टानों पर इकहरा छत्ता बनाती हैं। इसके प्रत्येक छत्ते से 30–40 कि.ग्रा. तक शहद प्राप्त किया जा सकता है। यह मधुमक्खी भ्रमणशील स्वभाव की होती है तथा स्थान बदलती रहती है। इसलिए अभी तक इन्हें पालना सम्भव नहीं हो पाया है।

• भारतीय मधुमक्खी (एपिस सिराना इंडिका)

यह पेड़ तथा दीवार के खोखलों तथा चट्टानों आदि की दरारों में छत्ते बनाती हैं तथा अंधेरे में ही रहना पसन्द करती हैं। यह 4–5 से लेकर 10–11 समानान्तर छत्ते बनाती हैं। एक मधुमक्खी छत्ते से वर्ष में 5–7 कि.ग्रा. शहद प्राप्त किया जा सकता है। ये भोजन की कमी या शत्रुओं द्वारा तंग किये जाने पर ही अपना स्थान छोड़ती हैं क्योंकि इनमें स्थान परिवर्तन की आदत बहुत कम होती है,

मधुमक्खियों का निरीक्षण करते हुए

• यूरोपीय या इटालियन मधुमक्खी (एपिस मैलिफेरा)

यह मधुमक्खी स्वभाव में शान्त तथा मेहनती होती है। भारत में इसे सन 1962 में लाया गया था तथा अब ये उत्तरी भारत में प्रमुख पालतू मधुमक्खी मानी जाती है। इनमें स्थान परिवर्तन की आदत नाम मात्र की होती है। अतः इन्हें मधुबक्सों में आसानी से पाला जा सकता है। एक मौन वंश से प्रति वर्ष 25–30 किलोग्राम तक शहद प्राप्त किया जा सकता है।

• मधुमक्खी परिवार

मधुमक्खियां संगठित होकर परिवार के रूप में रहती हैं। इनके परिवार में तीन प्रकार के सदस्य होते हैं। रानी, श्रमिक तथा नर मधुमक्खियां। लिंग भेद के आधार पर इनमें श्रम विभाजन बंटा रहता है जो निम्न प्रकार है:

मधुवाटिका में रखे मधुबक्से

• रानी मधुमक्खी

मधुमक्खियों की कालोनी या परिवार में इसकी संख्या केवल एक होती है। यह पूर्णतया मादा मक्खी आकार में सबसे बड़ी तथा इसका उदर नुकीला होता हैं। यह भूरे से काले रंग की होती है, इसका एकमात्र कार्य अण्डे देना तथा वंश वृद्धि करना है। फूलों के मौसम में जब मकरन्द तथा पराग की बहुतायत होती है यह प्रतिदिन 800 से 1200 तक अण्डे देती है जिनका वजन इसके शरीर के भार का लगभग दो गुना होता है। फूलों की कमी होने पर तथा बरसात के मौसम में यह संख्या काफी घट जाती है। इस प्रकार रानी मक्खी में समय के अनुसार अपने परिवार का नियोजित करने की क्षमता होती है। रानी मक्खी अपनी इच्छानुसार गर्भित या अगर्भित अण्डे देती है। गर्भित अण्डों से रानी और श्रमिक मक्खियां उत्पन्न होती हैं जबकि अगर्भित अण्डों से नर मक्खियां। रानी की आयु 2–3 वर्ष होती है तथा समय के साथ–साथ इनमें अण्डे देने की क्षमता कम होती जाती है।

• नर मक्खियां

छत्तें में लगभग एक प्रतिशत नर मक्खियां पायी जाती हैं तथा इनकी संख्या 200 से 500 तक होती हैं। यह आकार में मोटी तथा इनका पिछला भाग काला होता है। इनकी जीभ छोटी तथा कोई भी अंग कार्य करने योग्य नहीं होता। इनका एक मुख्य कार्य रानी मक्खी का गर्भाधान करना है जिसके लिए यह लगातार गुंजन करते रहते हैं। हवा में सैकड़ों नरमक्खियों में से कुछ को ही रानी मक्खी के साथ संभोग करने का मौका मिल पाता है और इसके तुरन्त बाद उनकी मृत्यु हो जाती है। नर मक्खियां छत्ते से निकलकर फूलों पर बैठती हैं परन्तु मधुरस तथा पराग लाने में असमर्थ होती हैं। यह सूर्य की धूप तथा हवा का सेवन करने में ही अपना समय व्यतीत करती है। वापिस छत्ते में आने पर खाने के माल पर टूट पड़ती हैं। इन्हें श्रमिक मक्खियां आहार कराती हैं तथा इनकी खुराक श्रमिक मक्खी से 8 से 10 गुना अधिक होती है। बसन्त तथा शरद काल में तो श्रमिक मक्खियां इनका भार वहन करती हैं परन्तु वर्षा या सर्दी के आगमन से छत्ते में भोजन की कमी होने पर इनका बहिष्कार कर दिया जाता है। लगभग चार घंटे तक छत्ते से बाहर भूखा रहने पर इनकी मृत्यु हो जाती है। नर मक्खी की आयु लगभग दो माह होती है।

• श्रमिक मधुमक्खियां

छत्ते में इनकी संख्या लगभग 99 प्रतिशत होती है। यह आकार में छोटी तथा अपूर्ण मादाएं होती हैं। इनमें अण्डाशय पूर्ण रूप से विकसित नहीं होते इसलिए अण्डे देने में असमर्थ होती हैं। श्रमिक मक्खियों में मातृभाव रहने के कारण परिवार के लालन–पालन और उसके कल्याण का सारा भार रहता है। इनमें उम्र के अनुसार श्रम विभाजन की एक अनोखी और सुचारु व्यवस्था पायी जाती है। बीस दिन की उम्र तक सभी श्रमिक मक्खियां घर के अन्दरुनी कार्य करती हैं। पैदा होने के 2 से 8 दिन तक इनके सिर से कुछ विशेष ग्रन्थियों द्वारा रायल जैली का स्त्राव होता है जिसे श्रमिक मक्खियों के लार्वा को दो दिन तक तथा रानी मक्खी के लार्वा को पांच दिन तक खिलाया जाता है। इसके अलावा रानी मक्खी द्वारा अण्डे देने के लिए जगह तैयार करना, छोटे बच्चों की देखभाल, नई मक्खी बनने पर उसकी सफाई, रानी मक्खी को खिलाना, मकरन्द तथा पराग का सेवन कर मोम बनाना तथा इसका इस्तेमाल कर छत्ते का निर्माण करना, मकरन्द में आवश्यकता से अधिक पानी का सुखाना, छत्ते की रक्षा तथा सफाई करना, मरी हुई मक्खियों को बाहर निकालना, गर्मी तथा सर्दी में छत्ते का उचित तापमान बनाये रखना, बड़ी मक्खियों द्वारा बाहर से लाये गये मधुरस तथा पराग को छत्ते में संग्रह करना आदि कार्य शामिल है। इसके साथ–साथ जब मक्खियां आठ से दस दिन की हो जाती हैं तो छत्ते से बाहर आकर उड़ना सीखती हैं तथा चारों तरफ की पहचान करती हैं जिससे अपने ही घर में वापिस आ सकें। इक्कीसवें दिन के बाद श्रमिक मक्खियां बाहर के कामों जैसे मकरन्द, पराग, पानी एवं गोंद एकत्र करने में लग जाती हैं। कुछ बड़ी मक्खियां छत्ते से चारों तरफ तीन कि.मी. तक जाती है तथा उपयुक्त जगह पर स्थित फूलों से मकरन्द तथा पराग लाने का निर्देश श्रमिक मक्खियों को नाच कर देती है। यह काम उनकी उम्र के अन्तिम दिनों तक चलता रहता है। इनका जीवन

काल निश्चित नहीं होता। सर्दी में कार्य कम होने पर यह 4–5 माह तक जीवित रहती हैं, जबकि बसन्त ऋतु में ज्यादा व्यस्त होने पर इनका जीवन काल 5–6 सप्ताह में ही समाप्त हो जाता है।

• जगह का चुनाव

मधुमक्खी पालने की जगह (मधुवाटिका) समतल तथा वहां पर पर्याप्त मात्रा में ताजा पानी, हवा, छाया तथा धूप होनी चाहिए। इसके पास अनावश्यक पेड़–पौधे, पानी का जमाव, भारी वाहनों के आने जाने के लिए सड़क या घनी आबादी नहीं होनी चाहिए। मधुमक्खियां सभी फूलों पर नहीं जाती। यह उन्हीं फूलों पर जाती हैं जहां पर इनको पर्याप्त मात्रा में मकरन्द तथा पराग मिल सके। इसलिए मधुमक्खी पालन जगह के चारों ओर एक से दो किलोमीटर तक निम्नलिखित मधुमक्खी पौधे होने चाहिए:–

शहद निकालने की मशीन

फलदार वृक्ष

अमरूद, लीची, नींबू जाति, नाशपाती, इमली, जामुन, खजूर, केला, नारियल तथा फालसा आदि।

फसलें

सरसों, तोरिया, तारामीरा, तिल, अरहर, बरसीम, अलसी, सूरजमुखी इत्यादि।

सब्जियां

भिन्डी, सेम, शलगम, मूली, प्याज, बैगन तथा शकरन्द आदि।

लकड़ी वाले पेड़

यूक्लेप्टिस, शीशम, बबूल, कचनार, सेमल, नीम, महुआ इत्यादि। इसके अलावा रसभरी, गुलाब तथा अन्य हजारों जंगली पौधे और जड़ी बूटियां है जिनसे मधुमक्खियों को भोजन मिलता है।

• उपयुक्त समय

मधुमक्खी पालन का व्यवसाय फरवरी–मार्च या अक्टूबर–नवम्बर में आरम्भ करना चाहिए। साधारणतः बसन्त तथा शीत ऋतु में वृक्षों तथा खेती की फसलों में फूलों की भरमार होती है तथा अधिक मधुस्त्राव होने से मक्खियों में कार्य करने का जोश बढ़ जाता है। इस समय मधुमक्खियों के लिए तापमान सबसे उपयुक्त होता है और इसी मौसम में ही रानी मक्खी काफी संख्या में अण्डे देती है जिससे सामान्य व्यक्ति काफी अनुभव प्राप्त कर सकता है।

• आवश्यक उपकरण

इस व्यवसाय को आरम्भ करने के लिए शुरू में मधुबक्सा, स्टैण्ड, मुंह रक्षक जाली, दस्ताने, धुंआदानी तथा हाईव टूल (बक्सा औजार) की आवश्यकता पड़ती है। इसके बाद मोमी शीटें, मक्खियों को भोजन देने के लिए पात्र, शहद निकालने की मशीन तथा चाकू आदि की जरूरत पड़ती है।

• मधुमक्खियां खरीदना

मधुमक्खी पालन आरम्भ करने के लिए सामान्य व्यक्ति को कम से कम चार से सात फ्रेमों की तैयार कालोनी खरीदनी चाहिए। इस समय यह ध्यान रखना चाहिए कि रानी मक्खी युवा अवस्था में हो तथा फ्रेमो पर लगे हुए छत्ते के कोषो में पर्याप्त मात्रा में अण्डे, लार्वा, शहद तथा पराग आदि हो। जहां तक सम्भव हो नर मक्खियां कम होनी चाहिए।

• मधुबक्सों का स्थानान्तरण करना

यह कार्य विशेष रूप से रात्रि में करना चाहिए। इसके लिए नीचे का तख्ता, शिशु कक्ष तथा अन्दर के ढक्कन को लोहे की पतियों द्वारा आपस में जोड़ देते है। प्रवेश द्वार पर लोहे की जाली लगा दी जाती है जिससे हवा का आवागमन तो बना रहे परंतु मक्खियां बाहर न निकल सकें। अब मधुबक्सों को मक्खियों सहित बड़ी सावधानी के साथ एक जगह से दूसरी जगह स्थानांतरण किया जा सकता है। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि परिवहन के दौरान इन्हें झटका न लगे। ऐसा होने पर छत्ते में क्षति होने की सम्भावना रहती है। नयी जगह पर पहुंचकर बक्सों को लगभग 8 से 10 फुट की दूरी पर तथा मुंह पूर्व–दक्षिण दिशा की तरफ रखते है जिससे अधिक से अधिक समय तक धूप प्राप्त हो सके। पहले दिन बक्सों का निरीक्षण नहीं करना चाहिए क्योंकि परिवहन के दौरान मक्खियां क्रुध हो जाती हैं तथा उनके काटने का भय रहता है। दूसरे दिन धुआं देने के बाद इनकी जांच करनी चाहिए। अगर किसी फ्रेम पर लगा छत्ता टूट गया हो तो उसे ठीक करके बक्से की अच्छी तरह सफाई कर देनी चाहिए।

• मधुमक्खियों का पोषण

ऋतुओं के अनुसार प्रकृति में भी परिवर्तन आता है। विशेष रूप से बसन्त ऋतु मक्खियों के लिए सब से महत्वपूर्ण समय है। ग्रीष्म

ऋतु में मधुबक्सों को ऐसी जगह रखना चाहिए जहां पर धूप या लू से उनका बचाव हो सके तथा पास में पानी की व्यवस्था करनी चाहिए। वर्षा ऋतु में शहद की कमी होने पर मक्खियों को चीनी की चाशनी पिलानी चाहिए। इसके लिए चीनी तथा पानी को 1:1 के अनुपात में मिलाकर गर्म करते हैं। एक तार की चाशनी बनने पर इसे ठंडा कर लिया जाता है। अब रात्रि के समय इसे किसी पात्र में भरकर बक्से में रख दिया जाता है। इसमें कुछ लकड़ी या घास के तिनके भी डाल देते हैं जिस पर बैठकर मक्खियां चाशनी को आसानी से खा लेती हैं। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि चाशनी बक्से पर या बाहर न गिरने पाये। ऐसा होने पर दूसरे बक्सों की मक्खियां आकर्षित होती हैं तथा उनमें लड़ाई होने की सम्भावना रहती है। जहां तक सम्भव हो सभी मधुबक्सों में चाशनी एक साथ पिलानी चाहिए। ठंड या हेमंत ऋतु में मक्खियों के बक्से ऐसी जगह रखने चाहिए जहां पर अधिक धूप तथा मधु प्राप्त हो सके।

• शत्रुओं से रक्षा

मधुमक्खियों के शत्रु मुख्य रूप से पतंगा, वास्प, गिरगिट, पक्षी, तिलचट्टा, छिपकली, चूहें, चीटें तथा चीटियां आदि हैं। इनसे बचाव के लिए सबसे सस्ता एवं सरल उपाय मक्खियों की संख्या बढ़ाना है। इससे किसी भी शत्रु की मक्खियों पर हमला करने की हिम्मत नहीं होती। समय–समय पर मधुबक्सों का निरीक्षण तथा नीचे के तख्ते की सफाई करते रहना चाहिए। ऐसे फ्रेम जिन पर मक्खियां न हों, उन्हें वहां से हटाकर दूसरी जगह पर सुरक्षित रखना चाहिए। बक्से में अगर कोई दरार या छेद हो तो उसे मिट्टी या गोबर द्वारा अच्छी तरह बन्द कर देना चाहिए जिससे कोई शत्रु अन्दर प्रवेश न कर सके।

• रोग से सुरक्षा

मक्खियां विभिन्न अवस्थाओं में अनेक प्रकार के जीवाणुओं तथा कीटाणुओं द्वारा उत्पन्न रोगों का शिकार हो जाती हैं। यह रोग बहुत ही संक्रामण होते हैं तथा सभी मक्ख्यां एक साथ मरने लगती हैं। ऐसे समय में बक्से की नियमित रूप से सफाई, हवा के आने जाने की व्यवस्था तथा मानसून व सर्दी के समय कृत्रिम भोजन का प्रबन्ध कर मक्खियों की संख्या बढ़ानी चाहिए। ज्यादा बीमारी फैल जाने पर मक्खियां उड़ नहीं सकती तथा इधर–उधर छलांग या नीचे के तख्ते पर रेंगने लगती है। पेट फूल जाता है तथा पैरों को इस प्रकार घसीटती हैं जैसे लकवा मार गया हो। कई बार सूक्ष्म कीटाणु मधुमक्खियों की श्वसन–नलिका में प्रवेश कर जाते हैं तथा वहां पर इनकी संख्या बढ़ने लगती हैं। इससे अकेरीन रोग फैलता है तथा सांस रूकने से मक्खियां मरने लगती हैं। इसके लिए फार्मिक एसिड का प्रयोग करना चाहिए। 5 मि.मी. अम्ल को एक छोटी शीशी में डालकर उस पर रूई का ढक्कन लगा देते हैं। रात्रि के समय इसे नीचे वाले बक्से में रखकर द्वार बन्द कर देते हैं। हर दूसरे दिन दुबारा शीशी में रसायन भरकर यह क्रिया 15–20 दिन तक दोहराते हैं जिससे इस बीमारी का पूर्ण निदान हो जाता है। कुछ कीटाणु मौन शिशु का रक्त चूसते हैं जो उन्हें प्रौढ़ नहीं बनने देते। अगर बन भी जाएं तो पंख या टांगे ठीक से विकसित नहीं होती और इनका आकार छोटा रह जाता है, इसमें उपचार के लिए सल्फर का एक ग्राम प्रति चौखट के हिसाब से धूड़ा करने पर इस बीमारी से छुटकारा पाया जा सकता है। इसके अलावा मन में कोई और सन्देह होने पर पास के मधुमक्खी विशेषज्ञों की सलाह लेनी चाहिए तथा समय पर उपयुक्त इलाज कर मक्खियों को मरने से रोकना चाहिए।

• शहद निकालना

मधुकक्ष में स्थित छत्तों में 80 प्रतिशत कोष्ट मक्खियों द्वारा बन्द कर देने पर उनसे शहद निकाला जा सकता है। इसके लिए सबसे पहले फ्रेमों से मक्खियां हटाकर मधुबक्से से निकाल लेते हैं। अब चाकू को पानी में गर्म करके कपड़े से पोंछ कर छत्ते से मोम की टोपियां उतारते हैं। इन्हें शहद निकालने वाली मशीन में रखकर गोल घुमाया जाता है। अपकेन्द्र बल द्वारा शहद तो बाहर निकल जाता है परंतु छत्ते की रचना को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुंचती। इन्हें मधुकक्ष में दुबारा रख देते हैं तथा मक्खियां शहद भरना शुरू कर देती हैं। शहद को मशीन से निकालकर एक टंकी में लगभग 48 घंटे तक पड़ा रहने देते हैं। ऐसा करने पर शहद में मिले हवा के बुलबुले तथा मोम इत्यादि शहद की ऊपरी सतह पर तथा मैली वस्तुएं पेन्दी पर बैठ जाती हैं। शहद को पतले कपड़े से छानकर स्वच्छ एवं सूखी बोतलों में भरकर बेचा जा सकता है। इस प्रकार शहद निकालने पर एक तो छत्ते में विद्यमान अण्डे, लार्वा, प्यूपा आदि नष्ट नहीं होते, साथ में मधु भी शुद्ध प्राप्त होता है।

• शहद का उत्पादन

उपरोक्त विधि द्वारा मधुमक्खी पालन करने पर एक साधारण किसान प्रतिवर्ष लगभग 25 किलोग्राम शहद का उत्पादन कर सकता है। इसे बेचकर वह अपनी आमदनी को बढ़ा सकता है। इसके साथ फसल की पैदावार में वृद्धि एवं मोम उत्पादन के अलावा प्रतिवर्ष कालोनियों का विभाजन कर उनकी संख्या दुगनी कर सकता है।

वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, कृषि विज्ञान केन्द्र, राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल–132001

ग्राम न्यायालयः मुकदमे निपटाने के सफर में 'मील के पत्थर'

अखिलेश आर्येन्दु

बढ़ते मुकदमों के बोझ को देखते हुए केंद्र सरकार ने ग्राम स्तर पर 'ग्राम न्यायालय' स्थापित करने का जो निर्णय लिया है, उसका स्वागत किया जाना चाहिए। देश की विभिन्न अदालतों में 2 करोड़ 85 लाख से अधिक मुकदमे लंबित पड़े हैं। इतनी अधिक संख्या में मुकदमों का निपटारा वर्तमान न्यायालयों की संख्या से नहीं हो सकता था। सरकार ने न्यायालयों की संख्या बढ़ाने का निर्णय ग्रामसभा स्तर पर लेकर न्याय के क्षेत्र में एक दूरगामी कदम उठाया है। जानकारी के अनुसार देश के उच्च और निचली अदालतों में 838 जजों के पद खाली पड़े हैं। लंबित मुकदमों को निपटाने के लिए उच्च न्यायालयों में 770 और निचली अदालतों में 9 हजार 239 जजों की आवश्यकता होगी। इसके बावजूद क्या ग्राम स्तर पर सबको सतत् न्याय द्रुतगति से मिलता रहेगा, इसे समझना मुश्किल है। ऐसे में ग्राम न्यायालय इस दिशा में 'मील के पत्थर' साबित हो सकते हैं। सरकार के अनुसार इन न्यायालयों की स्थापना पर 324 करोड़ रुपए वार्षिक खर्च होंगे।

ग्राम न्यायालयों की स्थापना के लिए केंद्र सरकार कई वर्षों से विचार कर रही थी, लेकिन राज्य सरकारों के सकारात्मक सहयोग का आश्वासन न मिलने के कारण इस दिशा में कदम आगे नहीं बढ़ाया जा सका था।

ग्राम न्यायालय का स्वरूप – संसदीय कार्यमंत्री प्रियरंजन दास मुंशी के अनुसार ग्राम न्यायालय का स्वरूप निम्न प्रकार होगा।

1. प्रस्तावित ग्राम न्यायालय किसी राज्य में अधीनस्थ न्यायपालिका में सबसे निचली अदालत के रूप में मान्य होंगे। ये पहले से कार्य कर रहीं अदालतों के अतिरिक्त होंगे।
2. ग्राम न्यायालयों के पीठासीन अधिकारी 'न्यायाधिकारी' कहे जाएंगे। इस पद पर नियुक्त होने वाले आवेदक प्रथम श्रेणी न्यायिक मजिस्ट्रेट के बराबर पात्रता रखने वाले होंगे। न्यायाधिकारी की नियुक्ति राज्य सरकारें सम्बद्ध उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश से सलाह लेकर करेंगी।
3. प्रस्तावित विधेयक में यह भी उल्लेख होगा कि किस तरह दीवानी और फौजदारी मामलों की सुनवाई ये ग्राम न्यायालय करेंगे।
4. सारे कार्य पारदर्शी ढंग से सरलता और सहजता से किए जाएंगे।

इस तरह ग्राम न्यायालय अब तक के सभी किस्म के न्यायालयों से अलग और तीव्र ढंग से मामले निपटाने वाले होंगे।

ग्रामों में हर वर्ग एवं समूह के लोगों को स्थानीय स्तर पर न्याय उपलब्ध कराना – वह भी सस्ता और सहज – एक दूरगामी कदम कहा जाएगा। इससे ग्रामीणों को कई तरह के लाभ होंगे। ग्राम न्यायालय की स्थापना का विचार देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने अपने प्रधानमंत्री काल में ही किया था। नेहरू जी का विचार था कि देश के हर नागरिक को देश के हर क्षेत्र एवं भाग में न्यायपालिका का लाभ मिलना चाहिए। प्रत्यक्ष तौर पर वे गांवों में निवास करने वाली देश की 75 प्रतिशत जनता को सस्ता, सहज और कम से कम समय में न्याय दिलाने के हिमायती थे। आजादी के 60 साल बीत जाने के बाद कांग्रेस शासन प्रणीत केंद्र की यूपीए सरकार की पहल पर नेहरू जी के विचारों को मूर्तरूप देने की पहल कर एक अत्यन्त दूरगामी और सार्थक कदम उठाया गया है।

गांव स्वराज्य व्यवस्था का कदम – पंचायत स्तर पर ग्राम न्यायालयों की स्थापना से जहां सबको सस्ता, सहज और तीव्र (कम समय में) न्याय मिल सकेगा वहीं पर गांवों में पंचायतों के मनमानी फैसलों से भी मुक्ति मिल सकेगी। निर्धन से निर्धन और अनपढ़ व्यक्ति भी जल्दी न्याय पा सकेगा। गांवों में जल, जंगल, जमीन, विवाह और पशु सम्बंधी समस्याएं सबसे अधिक देखी जाती हैं। आए दिन आपसी विवाद के कारण मन–मुटाव एवं झगड़े–फसाद होना आम बात है। निर्धन, स्त्री, बच्चों और अनपढ़ पर शोषण पहले से अधिक बढ़ा है। ऐसे में पंचायत स्तर पर मान्य न्याय व्यवस्था करोड़ों लोगों को राहत पहुंचाने वाली सिद्ध होगी। तहसील, जिले और प्रदेश स्तर पर अभी तक न्यायालयों के माध्यम से जो मुकदमे निपटाए जाते थे, वे काफी कुछ ग्राम स्तर पर ही निपटा दिए जाएंगे, जिससे इनका बोझ हल्का होगा और हर मुकदमे की पैरवी और बहस को ज्यादा समय दिया जा सकेगा।

महात्मा गांधी ने अपनी पुस्तक 'ग्राम स्वराज्य' में लिखा है गांव तब तक आत्मनिर्भर नहीं होंगे जब तक वे हर स्तर पर अपनी योजनाएं, न्यायपालिका और विधान का निर्माण नहीं करने लगेंगे। मतलब हर व्यक्ति को स्थानीय स्तर पर न्याय मिले इसकी व्यवस्था ग्राम स्तर पर होना आवश्यक है। आज देश में न्यायिक क्षेत्र में बजट का .078 प्रतिशत ही खर्च किया जाता है। इसे बढ़ाना जरूरी है। 324 करोड़ रुपए ग्राम न्यायालयों के लिए बजट में रखने होंगे। या इतनी बड़ी रकम को केंद्र और राज्य सरकारें मिलकर वहन करेंगी यह आने वाला वक्त ही बतायेगा।

महंगाई बढ़ने के कारण यात्रा खर्च, वाहन किराया, वकील का खर्च लगातार बढ़ता जा रहा है। गांवों से लोगों को कोर्ट–कचहरी के चक्कर लगाने में जहां सारा दिन लगता है वहीं पर हैसियत से अधिक पैसा खर्च करना पड़ता है। इससे कृषि और दैनिक कार्यों पर जहां प्रभाव पड़ता है, वहां खून–पसीने की कमाई भी गंवानी पड़ती है। ग्राम न्यायालयों की व्यवस्था हो जाने से केवल जल्दी व कम कीमत पर न्याय ही नहीं मिलेगा, बल्कि लोगों को काम धंधा छोड़ने की भी आवश्यकता नहीं पड़ेगी। महिलाओं, निरक्षरों और विकलांगों को इधर–उधर भटकना भी नहीं पड़ेगा।

रोजगार सृजन – ग्राम स्तर पर लाखों न्यायालयों की स्थापना का मतलब लाखों लोगों को नए सिरे से रोजगार मिलेगा। करोड़ों की संख्या में गांवों में वकालत की डिग्री लेकर नौजवान बेरोजगार पड़े हैं। तहसील, जिला और प्रदेश स्तर के न्यायालयों में वकीलों की भीड़ इतनी अधिक हो गई है कि एक–एक मुकदमे पर कई–कई वकील केस फाइल करने में जुटे रहते हैं। ग्राम स्तर के न्यायालयों की स्थापना होते ही जहां मुकदमों का बोझ वर्तमान न्यायालयों पर कम होगा, वही वकीलों की भीड़ भी कम हो जाएगी। दूसरा जो महत्वपूर्ण प्रभाव दिखेगा वह स्त्रियों और विकलांगों के लिए भी रोजगार के नए अवसर खुलेंगे। गवाही की पारदर्शिता और मुकरने की समस्या से काफी हद तक निजात मिल सकेगी। सर्वखाप पंचायतों की मनमानी से लोगों को मुक्ति मिलेगी। वे लोग भी न्याय पा सकेंगे जो किन्हीं कारणों से शहर नहीं जा पाते थे।

जीवन–स्तर में सुधार – सालों से मुकदमे बाजी में उलझे करोड़ों ग्रामीण करोड़ों रुपए न्याय पाने की आशा में खर्च कर डालते हैं। ग्राम स्तर पर न्यायालय हो जाने पर जहां मानसिक और आर्थिक तनाव से इन्हें मुक्ति मिलेगी वहीं स्वास्थ्य में भी सुधार आएगा। जो पैसा किसान–मजदूर मुकदमे की परवी के दौरान मजबूरी में खर्च कर डालता है, वह अपने परिवार और सेहत पर लगा सकेगा। करोड़ों ग्रामीण ऐसे हैं जो मुकदमे में उलझकर अपनी संतानों को उचित शिक्षा नहीं दिला पाते हैं, उनके लिए यह 'नया सबेरा' जैसा ही होगा।

टी–33, ग्रीन पार्क लेन, नई दिल्ली–110016

सदस्यता कूपन

मैं/हम **कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का
(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर *निदेशक, प्रकाशन विभाग* को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....

पता .....

..... पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली–110 066

जैव–विविधता और उसका संरक्षण

अरविन्द कुमार शुक्ल

प्रकृति और जैव–विविधता का संरक्षण आज पूरी दुनिया के लिए एक चुनौतीपूर्ण विषय बन चुका है। क्या होगा इस नयी चुनौती का नया विकल्प, इस पर तो फिलहाल चर्चाओं और प्रयासों का ही बाजार गर्म है, इस समस्या पर किसी ठोस कदम का उठना अभी सिलसिलों के दौर में है। ग्लोबल विलेज के इस युग में सुखद है तो इतना कि आज प्रकृति और पर्यावरण जैसे विषय भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा और सुधार के अन्तर्गत स्थान पाने लगे हैं।

भारत में पर्यावरण प्रदूषण और प्रकृति संरक्षण यह दोनों समस्याएं बहुत बाद में आयीं। लेकिन हम बाद में आयी इस बला से भी खुद को सलामत न रख सके जिसकी कीमत हमें अपने यहां से कई जीव–जन्तु, पेड़–पौधों का अस्तित्व गंवाकर चुकानी पड़ी। पश्चिमी दुनिया सबसे ऊपर जाने के लिए प्रकृति का दोहन करती है वहीं हम अपने लोगों का पेट भरने के लिए प्रकृति का दोहन करते हैं। अब भारतीय सन्दर्भों में भी यह बात बेमानी हो गई है क्योंकि हमने स्वादिष्ट और लजीज भोजन देने वाली नई वनस्पतियों और शैवालों को खुद ही नष्ट कर दिया है।

इसे प्राकृतिक संसाधनों का सर्वेक्षण एवं अन्वेषण करने वाली भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण की कार्यशैली को देखकर समझा जा सकता है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के विभिन्न सर्किल कार्यालयों और यूनिटों द्वारा राष्ट्रीय उद्यानों, अभयारण्यों और नमभूमियों सहित देश के विभिन्न भागों में 44 फील्ड/खोज संचयन दौरे किए गए। फील्ड/खोज संचयन दौरों के दौरान 4500 से अधिक नमूने एकत्र किए गए जिनमें पादपों के निम्न ग्रुप अर्थात् अलगई, फंगी, लिंचस, ब्रिसोफाइट्स और पैट्रीडोफाइट्स शामिल हैं। लगभग 3500 नमूने जो 385 प्रजातियों से संबंधित थे उन्हें बी.एस.आई. के विभिन्न मंडलों/यूनिटों द्वारा अभिज्ञात किया गया। राष्ट्रीय/राज्य/क्षेत्रीय फ्लोरा के तहत निम्नलिखित रिजीजनरी और पुष्प संबंधी अध्ययनों के बारे में बारह हारबेरियम अध्ययन दौरे किए गए–जो इस प्रकार हैं –

फ्लोरा ऑफ इंडिया : आर्कडेसिया (जीनस–ओबेरोनिया, माइक्रोस्टाइलिस, लिपारिस ओरियोकिस एवं कोराल्लोरहिजा)

फ्लोरा ऑफ इंडियसः लेमियासिया (प्लैक्ट्रान्थस ग्रुप कोलियस सहित)

इसी प्रकार पादक विविधता प्रलेयान कार्यक्रमों को भी बढ़ावा दिया गया। इसके अंतर्गत आर्किडेसिया (जेनेरा ओबेरोनिया, माइक्रोस्टाइलिस, लिपारिस, आर्कोरकिस और कोराल्लोर हिजा) पाडुंलिपि का काम पूरा किया गया। लौरेसिया (लिटसिया, नियोलिटसिया, और लिन्डेरा को छोड़कर) एक्टीनोडफेन, क्रिण्टोकाइया, एलसियोडाफने, डीलस्कामाइडिया, सिन्नामोमुम, डोडेकेडिनिया की 18 प्रजातियों के टैक्सानामिक विवरण को पूरा किया गया।

इसी तरह क्षेत्रीय और राज्य वनस्पति जात के सर्वेक्षण पर भी जोर दिया गया। इसके अंतर्गत हिमालय क्षेत्र की टेरीडोफाइटिक वनस्पति जात की 32, अफाइल्लोफेरिल्स आब नार्थ वेस्ट हिमालय की 45, पश्चिमी हिमालय के शीत मरुस्थल की वनस्पतियों की 5 प्रजातियों और भारतीय वानस्पतिक बागान की 17 प्रजातियों की पाडुंलिपि पूरी की गई। इसके अलावा 113 मोनोकाट प्रजातियों के नोमनक्लेचर तैयार किए गए। गार्डन से एकल 40 हारबेरियम नमूनों की पहचान की गई। अर्किडेसीया की 145 प्रजातियों, 32 पोआसिया प्रजातियों, जिडाबिरेसीपा की 18 प्रजातियों, 21 आरेसिया प्रजातियों के और टोक्सोनोमिक विवरण पूरे किए गए। इसी के साथ आर्किडेकसीया ऑफ बोटेनिकल गार्डन ऑफ बारापानी शीर्षक नामक अनुसंधान पेपर संप्रेषित किया गया जिसमें 45 जेनेरा की 135 प्रजातियां संकलित हैं।

प्राकृतिक आपदाओं से नष्ट होते पेड़–पौधें

राज्य वनस्पति जात के अंतर्गत फ्लोरा ऑफ

नदियों की स्वच्छता एवं संरक्षण जरूरी

असम, खंड–दो के अंतर्गत पाडुंलिपि को अंतिम रूप दिया जा रहा है। फ्लोरा ऑफ मिजोरम खंड–दो 97 प्रजातियों के डिस्क्रिप्शन का सम्पूर्ण कार्य पूरा किया गया। फ्लोरा ऑफ सिक्किम की 52 प्रजातियों का टोक्सोनोमिक कार्य पूरा किया गया। फ्लोरा ऑफ उत्तर प्रदेश खंड–दो में 199 प्रजातियों का टेक्सोनोमिक कार्य पूरा किया गया। फ्लोरा ऑफ जम्मू और कश्मीर, खंड–दो में 98 प्रजातियों का टेक्सोनोमिक कार्य पूरा किया गया। इसी तरह केरल, अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह, पश्चिमी बंगाल और लक्षद्वीप में भी कई नमूनों की खोज की गई।

इसी तरह निचले स्तर पर जिला वनस्पति जात सर्वेक्षण का कार्य शुरू किया गया। इसमें महाराष्ट्र के संगली जिले के पौधे की चैकलिस्ट का कार्य पूरा किया गया। तवांडा जिला, अरुणाचल प्रदेश का मोस फ्लोरा का सर्वेक्षण पूरा किया गया और इसमें 250 प्रजातियों की खोज की गई। इसमें कुल 1028 जमा नमूनों में 950 की पहचान हो चुकी है। आंध्र प्रदेश के मेरिडुमिल्ली जिले में 900 फ्लोरा प्रजातियों की पांडुलिपि परिवार की मुख्य विशेषताओं के साथ पूरी की गई है। आंध्र प्रदेश के ही मेंढक जिले में फ्लोरा पांडुलिपि को अंतिम रूप दिया जा रहा है और लगभग 90 प्रतिशत सुधार पूरे किये जा चुके हैं। इन सुधारों के बाद यह प्रकाशित हो जायेगी। उत्तरी 24 परगाना जिला पश्चिम बंगाल की लिचिन फ्लोरा परियोजना पूरी की जा चुकी है और पांडुलिपि तैयार की जा रही है।

इसी तर्ज पर भारतीय प्राणि सर्वेक्षण कार्यक्रम भी चलाया जाता है। इसका उद्देश्य समृद्ध प्राणि विविधता से संबंधित हमारी विशिष्ट जानकारी का संवर्धन करने के लिए सर्वेक्षण, अंवेषण और अनुसंधान कार्य करना रहा है। इसका मुख्यालय कोलकता में है और देश के कई भागों में इसके 16 क्षेत्रीय केन्द्र हैं। यह मंत्रालय के अंतर्गत एक प्रीमियर संस्थान है। भारतीय प्राणि सर्वेक्षण का अभी हाल में पुनर्गठन किया गया जिसका उद्देश्य राज्यों के प्राणिजात, संरक्षण क्षेत्रों के प्राणिजात, महत्त्वपूर्ण परिप्रणालियों के प्राणिजात, संकटापन्न प्रजातियों की स्थिति का सर्वेक्षण और पारिस्थितिकी अध्ययन। पर्यावरण प्रभाव मूल्यांकन सर्वेक्षण एवं इसके अतिरिक्त भारत के प्राणिजात से संबंधित पहले से चल रहे कार्यक्रमों को भी जारी रखना है।

कुल बाईस व्यापक सर्वेक्षण किए गए जिनमें से हिमाचल प्रदेश में आठ, गोविंद सागर में पांच, पोंग डॉम में दो, व्यास नदी में एक, भोज मध्य प्रदेश में, नवभूमि तमिलनाडु में पुलकिट और पश्चिम बंगाल में हुगली नदी में दो–दो सर्वेक्षण किए गए। इसके अलावा बाढ़ वाली मैदानी नमभूमि (असम), उत्तरी बिहार में गंगा नदी के चौड़, दक्षिणी उड़ीसा के समुद्र तटीय प्रवासों, उत्तरांचल राज्य के पौढ़ी गढ़वाल की नापद नदी घाटी, गुजरात में नाल सरोवर और बिहार के माधोपुरा–भगवानपुर में भी एक–एक सर्वेक्षण कार्य किए गए हैं। नदियां किसी भी देश की संस्कृति का एक अंग होती है। अतः सरकार ने जल शोधन और संरक्षण का प्रयास तेज कर दिया है। राष्ट्रीय नदी संरक्षण निदेशालय इसके लिए राज्य सरकारों को सहायता उपलब्ध करवाकर राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना और राष्ट्रीय झील संरक्षण योजना के अंतर्गत नदी एवं झील कार्ययोजनाओं को कार्यान्वित कर रहा है।

प्रदूषण शमन योजना को कार्यान्वित करके देश में स्वच्छ जल के प्रमुख स्रोत नदियों के जल को स्नान करने की श्रेणी में लाकर उनके जल की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना के अंतर्गत कुल 34 नदियों को शामिल किया गया है।

गंगा कार्य योजना के अंतर्गत 82.11 करोड़ रुपए की अनुमोदित लागत से गंगा नदी के मुख्य पाट के साथ 60 कस्बों में अतिरिक्त कार्य किया जा रहा है। देश के 14 राज्यों की 29 नदियों के किनारे बसे 64 कस्बों में भी प्रदूषण शमन कार्य शुरू किया गया है। नदी संरक्षण योजना के अंतर्गत अभी तक स्वीकृत 340 प्रदूषण शमन परियोजनाओं में से 18 परियोजनाएं पूरी कर ली गई हैं। झील संरक्षण योजना के अंतर्गत डल और केरल की वेल्ली अक्कुलुअम झील सहित अभी तक 37 झीलों पर कार्य किया गया।

पर्यावरणीय अनुसंधान, पर्यावरणीय सुरक्षा, संरक्षण एवं प्रबंधन के बहु–विषयक पहलुओं में अनुसंधान के संवर्धन हेतु एक केंद्रीय योजनागत स्कीम है। इस स्कीम का उद्देश्य बेहतर पर्यावरण प्रबंधन हेतु कार्य नीतियां, प्रौद्योगिकियां और कार्यविधि प्रणालियां विकसित करने के लिए आवश्यक सूचना एकत्र करना है। इसका उद्देश्य संसाधन, प्रबंधन, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और अवक्रमित क्षेत्रों के पुनरुद्धार की समस्याओं के

निराकरण के लिए प्रयास करना भी हैं। इसके अतिरिक्त, इस स्कीम का उद्देश्य देश में पर्यावरणीय प्रबंधन के दायित्व को निभाने हेतु अवसंरचानात्मक सुविधाओं और वैज्ञानिक जनशक्ति को सृदृढ़ बनाना भी है। विशेषज्ञ समितियों द्वारा आवश्यक जांच, समीक्षा और सिफारिश के पश्चात् देशभर की विभिन्न संस्थाओं/विश्वविद्यालयों और गैर–सरकारी संगठनों को पर्यावरण के अभिजात प्रमुख क्षेत्रों में अनुसंधान अनुदान प्रदान किया जाता है। मंत्रालय में गठित एवं अनुसंधान सलाहकार समिति अनुसंधान प्रस्तावों की समीक्षा करती है और उनके निधियन के विचारार्थ संबंधित विशेषज्ञ समितियों की सिफारिश करती है। इसके कार्यकलापों का समन्वयन मंत्रालय के अनुसंधान प्रभाव द्वारा किया जाता है।

पिछले वर्ष के दौरान विज्ञान के लिए कुछ नए टेक्सा की खोज की गई जो निम्नलिखित हैः–

फाइलम – अर्थ्रोपोडा
क्लास – इंसेक्टा
आर्डर – हाईमेनोपेटरा
फैमिली – टेरोमालिडिया

- मेक्रोग्लेसस सिवानी प्रजाति नॉव
- थियोकोलैक्स राधा कृष्णानानी, एस.पी.नॉव
- ओफेलोसिया मेकुलाता एस.पी.नॉव

फैमिली – यूरोटोमाइडे

- क्लास – क्रुसवासिया
  फैमिली – डाफनिडे
- सिमोसिफालॅस गोआंसिस प्रजाति नॉव

इन सारे सर्वेक्षणों के दौरान भारत में प्राणिजात वर्गिकी के अध्ययन को लिपिबद्ध किया गया। विभिन्न राज्यों, संरक्षित क्षेत्रों और अन्य प्रणालियों से एकल की गई जातियों का प्रकाशन फाउना ऑफ इंडिया : एक्वेटिक ओलींगोकेयटा में किया गया। इन संरक्षित जीवों में राजस्थान से नोमाटोडा के छः नमूने, ये दो प्रजातियों से लिए गये हैं, कोलियोपेट्रा के 15 नमूने जो 15 प्रजातियों के हैं, इसी तरह महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़ से भी कई प्राणियों के नमूने संरक्षण के लिए रखे गये।

इनके साथ ही प्रगति की समीक्षा और नए स्थलों की पहचान करने के लिए अनेक क्षेत्रीय स्तर की कार्यशालाएं आयोजित करने का काम इस वर्ष भी जारी रखा गया है। जहां मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल द्वारा किए गए कार्यों की समीक्षा रायपुर में आयोजित क्षेत्रीय कार्यशाला में की गई, वहीं सभी दक्षिणी राज्यों के कार्यों की समीक्षा तिरूवनंतनुरम् में

जैवमंडल रिजर्वों के नाम	कुल भौगोलिक क्षेत्रफल (वर्ग किमी)	अधिसूचना की तारीख	स्थान (राज्य)
अगास्थ्या	1701	12.11.01 से प्रारंभ 30.3.2005 विस्तार किया गया।	तमिलनाडु में कन्याकुमारी और तिरूनेलवेली जिले एवं तिरूवनन्तपुरम, कोलम और पायनमथिट्टा के भाग।
अचंकमार – अमरकंटक	3835.51	30.03.05	मध्य प्रदेश के अनुपुर और डिंडोरी जिले के कुछ भाग एवं छत्तीसगढ़ राज्य के विलासपुर जिले के भाग।

इसी प्रकार अंतर्राष्ट्रीय नेटवर्क 'यूनेस्को' द्वारा मान्यता प्राप्त, जैवमंडल रिजर्वों की स्थिति निम्नलिखित है –

जैवमंडल रिजर्वों के नाम	कुल भौगोलिक क्षेत्रफल (वर्ग किमी)	अधिसूचना की तारीख	स्थान (राज्य)
नीलगिरी	5520	1.8.1986	नागरहोल, बांदीपुर और मदुमलाई, नीलांबुर शांत घाटी और सिरुबानी पहाड़ियों का कुछ भाग (तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक)
नन्दा देवी	2236.74	18.01.1980	चमोली, पिथौरागढ़ और अल्मोड़ा जिले का कुछ भाग।
सुन्दरबन	9630	29.3.1989	गंगा डेल्टा और ब्रह्मपुत्र नदी प्रणाली का हिस्सा।
मन्नार की खाड़ी	10500	18.2.1989	भारत और श्रीलंका के बीच मन्नार की खाड़ी (तमिलनाडु) का भारतीय हिस्सा।

मरुस्थलीकरण व सूखे की समस्या के निपटने और इस संबंध में देश के लोगों, नीतिनिर्माताओं एवं स्टॉकहोल्डरों के बीच जागरूकता पैदा करने के लिए 17 जून 2005 को विश्व दिवस आयोजित किया गया।

यू.एन.सी.सी.डी. की सी.ओ.पी. –7 बैठक, 17 अक्टूबर, 2005 को नैरोबी, केन्या में आयोजित की गई। पर्यावरण एवं वन राज्य मंत्री की अध्यक्षता में भारतीय शिष्ट मंडल ने इस बैठक में भाग लिया। सी.ओ.पी. –7 में भारत में यू.एन.सी.सी.डी. प्रक्रियाओं के कार्यान्वयन तथा उन्हें सुदृढ़ बनाने की जरूरत की समीक्षा की गई। इसमें विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी समिति के कार्यकरण, मरुस्थलीकरण की समस्या से निपटने के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना के कार्यान्वयन हेतु संसाधनों को जुटाने के बारे में भी समीक्षा की गई। भारतीय प्रबंधन संस्थान, बंगलौर के सहयोग से 15–16 दिसम्बर, 2005 को बंगलौर में आर.आई.ओ. कंवेंगन पर एक राष्ट्र स्तरीय सिनर्जी का आयोजन किया गया।

आयोजित क्षेत्रीय कार्यशाला में की गई और उसके बाद अगस्थियामलाई जैवमंडल रिजर्व क्षेत्र में अगस्थियामलाई पहाड़ियों के तमिलनाडु वाले हिस्से को मिलाकर विस्तार किया गया। पश्चिमी क्षेत्र के कार्यों की समीक्षा जून 2005 में भुज (गुजरात) में आयोजित कार्यशाला में की गई, जहां तटीय क्षेत्र के जैवमंडल रिजर्वों जैसे सुन्दरबन, मन्नार की खाड़ी द्वारा किए गए कार्यों और पश्चिमी राज्यों, गुजरात एवं महाराष्ट्र पाइप लाइन प्रस्तावों पर चर्चा की गई। पूर्वोत्तर क्षेत्र में स्थित जैवमंडल रिजर्वों द्वारा किए गए कार्यों का मूल्यांकन करने के लिए एक अन्य कार्यशाला 9–22 नवम्बर, 2005 में गंगटोक में आयोजित की गई। मिजोरम और अरुणाचल प्रदेश में अनेक संभावना वाले स्थलों की पहचान की गई। नगालैंड ने भी अपने यहां जैवमंडल रिजर्वों के लिए उपयुक्त स्थलों की पहचान करने का आश्वासन दिया। वर्ष 2005 में शामिल जैवमंडल रिजर्वों की सूची पहले दी जा चुकी है।

इन प्रयासों के अलावा संबंधित राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों को मंत्रालय द्वारा वित्तीय सहायता देकर इन चारों क्षेत्रों में प्रबन्ध कार्ययोजनाएं कार्यान्वित की जा रही है। मंत्रालय ने भारत की प्रवाल भित्तियों पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए प्रसिद्ध वैज्ञानिकों को इसका सदस्य बनाकर एक वर्किंग ग्रुप गठित किया है। वर्किंग ग्रुप की पहली बैठक 13 अक्टूबर, 2005 को मंत्रालय में आयोजित की गई। वर्किंग ग्रुप ने देश में प्रवाल भित्ति संरक्षण और प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं पर विचार विमर्श किया और कई सिफारिशें भी की। पर इन सारे सरकारी प्रयासों की अपनी सीमाएं और संभावनाएं हैं। इन समस्याओं को महज सरकारी प्रयासों की दरकार के लिए छोड़ना हमारी बड़ी भूल होगी। हालांकि सरकार आने वाले खतरों को समझती है और सजग भी है।

लेकिन हर समय में और हर समाज में अपने दौर के कुछ प्रश्न होते हैं जिनका सामना उस समय का समाज अपने ढंग से करता है। आज के वैश्विक समाज के सामने भी इसी तरह के प्रश्न चुनौती बनकर आए हैं। अब इनका विकल्प तो तलाशा जा रहा है, लेकिन मंजिल अभी दूर है।

–प्रथम तल, 1212, डा. मुखर्जी नगर, दिल्ली–110009

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना

ग्रामीण विकास मंत्रालय प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (पीएमजीएसवाई) का कार्यान्वयन करता है। इस योजना का उद्देश्य मैदानी इलाकों में 500 से अधिक की आबादी वाली बस्तियों तथा पहाड़ी क्षेत्रों, रेगिस्तानी और जनजातीय क्षेत्रों में 250 से अधिक आबादी वाली बस्तियों को बारहमासी सड़कें उपलब्ध कराना है। **पीएमजीएसवाई** के तहत अभी तक एक लाख किलोमीटर से भी ज्यादा लंबाई की सड़कों का निर्माण हो चुका है तथा अन्य एक लाख किलोमीटर सड़क निर्माण का कार्य प्रगति पर है। **भारत निर्माण** के तहत देश की 66,802 बस्तियों को वर्ष 2009 तक सड़क संपर्क उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया। इसके लिए 1.46 लाख किलोमीटर की नई सड़कें बनानी होंगी। इसके अलावा भारत निर्माण के तहत मौजूदा 1. 94 लाख मार्गों और ग्रामीण सड़क संपर्कों को उन्नत बनाने तथा सभी गांवों को बाजारों से जोड़ने का लक्ष्य रखा गया है। यह कार्य समयबद्ध रूप में किया जाएगा। यह योजना दिसम्बर, 2000 में शुरू की गई थी। तब से इस कार्यक्रम के तहत ग्रामीण सड़कों के निर्माण के लिए न केवल मानक तथा तकनीकी पहलू तय किए जा चुके हैं, बल्कि परियोजनाओं के कुशल प्रबंध के लिए कई बेहतर तौर–तरीके भी अपनाए गए हैं।

ओजोन परतः आज की चिंता

ओजोन परत को ह्रास पहुंचाने वाले पदार्थों पर मॉन्ट्रियल समझौता, ओजोन के क्षरण के लिए जिम्मेदार समझे जाने वाले पदार्थों के उत्पादन को धीरे–धीरे समाप्त कर ओजोन परत के संरक्षण का अन्तर्राष्ट्रीय समझौता है। समझौते पर विभिन्न देशों द्वारा हस्ताक्षर करना 16 सितम्बर 1987 से शुरू हुआ था और 1 जनवरी 1989 से यह लागू हो गया। उसके बाद से इसमें पांच संशोधन 1990 (लन्दन), 1982 (कोपनहेगन), 1995 (वियेना), 1997 (मॉन्ट्रियल) और 1999 (बीजिंग) में हुए हैं। इसकी व्यापक स्वीकार्यता और कार्यान्वयन को देखते हुए इसे असाधारण अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का एक उत्तम उदाहरण के रूप में सराहा गया है। संयुक्त राष्ट्र के महासचिव कोफी अन्नान ने तो इसे अब तक का संभवतः सबसे सफल अन्तर्राष्ट्रीय समझौता करार दिया है।

यह समझौता उन हैलोजन युक्त हाइड्रोकार्बनों के समूहों के इर्द–गिर्द बनाया गया है, जिनमें ओजोन के क्षरण के गुण पाये गये हैं। प्रत्येक समूह के लिए समझौते में एक समय सारिणी निर्धारित की गयी है, जिसके अनुसार उन पदार्थों के उत्पादन को धीरे–धीरे समाप्त कर अंततः बिल्कुल बंद करना होगा।

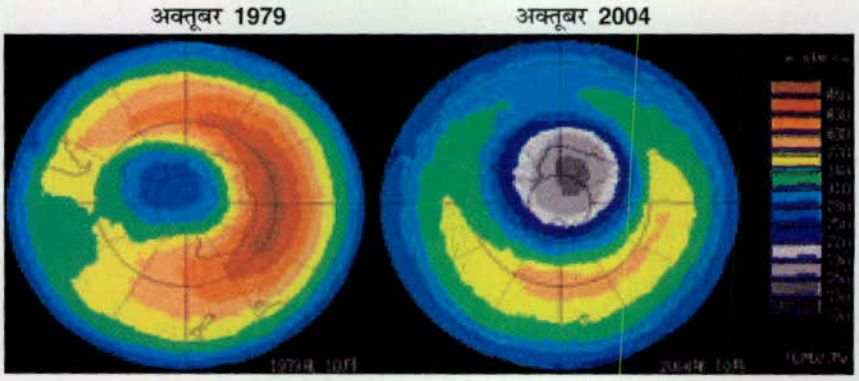

ओजोन परत का बढ़ता क्षरण

समझौते का घोषित उद्देश्य यह है कि हस्ताक्षर करने वाले देश यह मानते हुए कि कतिपय पदार्थों का विश्व व्यापी उत्पादन ओजोन परत को पर्याप्त हानि पहुंचाता है या उसे इस ढंग से संशोधित करता है कि मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है,.....ओजोन परत का क्षरण करने वाले इन पदार्थों के विश्व व्यापी उत्सर्जन को समान रूप से नियंत्रित करने वाले एहतियाती उपाय उठाने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ हैं। इसका अंतिम लक्ष्य वैज्ञानिक मेधा के विकास के आधार पर इन पदार्थों को मिटाना है... यह स्वीकार करते हुए कि विकासशील देशों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विशेष प्रावधानों की आवश्यकता है....।

सीएफसी (क्लोरो फ्लोरो कार्बन) के उपयोग और उत्पादन को सीमित करने वाले चरणबद्ध उपायों की शृंखला को स्वीकार करेंगे। इसमें निम्नलिखित कथ्य को भी शामिल किया गया है।

समझौते में समूह– एक 'क' में परिभाषित नियंत्रित पदार्थों का उपयोग और उत्पादन 1991 से 1992 के दौरान 1986 में गणना किए गए इन्हीं पदार्थों के उपभोग और उत्पादन से 150 प्रतिशत से अधिक नहीं होगा, 1994 से आगे उन्हीं पदार्थों का वार्षिक उपभोग और उत्पादन 1986 के अंकित स्तर से 25 प्रतिशत से अधिक नहीं होगा। 1996 से इन नियंत्रित पदार्थों के उपभोग और उत्पादन का आंका गया स्तर शून्य से आगे नहीं जायेगा।

कुछ पदार्थों (हैलोन 1211, 1301, 2402, सीएफसी 13, 111, 112 आदि) के समापन का चरण धीरे–धीरे तय किया गया है (2010 तक शून्य) और कुछ रसायनों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दिया गया है (कार्बन टेट्राक्लोराइड, 1,1,1–ट्राइक्लोरोईथेन)। अल्प रूप से सक्रिय एचसीएफसी को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करने की क्रिया 1996 में शुरू हुई थी और तब तक लगातार जारी रहेगी जब तक, 2030 में यह पूरी तरह से समाप्त नहीं हो जाता।

जिन पदार्थों का स्वीकार्य विकल्प अभी तक नहीं मिल पाया है, उनके जैसे आवश्यक उपयोग वाले पदार्थों के कुछ अपवाद भी हैं (उदाहरणार्थ अस्थमा और अन्य श्वास सबंधी समस्याओं के उपचार में आम तौर पर इस्तेमाल होनेवाले मीटर्ड डोज नपी हुई खुराक वाले)।

समूह 1 'क' के पदार्थों के नाम हैं : सीएफसी 13 (सीएफसी–11), सीएफ2सी12 (सीएफसी–12), सी 2 एफ 3 सी 13 (सीएफसी–113), सी 2 एफ 4 सी 12 (सीएफसी–114), और सी 2 एफ 5 सी1 (सीएफसी–115)।

अतीत की रेखाएं

1973 में कैलीफोर्निया अरवाइन विश्वविद्यालय के रसायनज्ञ फ्रैक शेरवुड रोलैंड और मारिया मोलिना ने पृथ्वी के वातावरण में

सीएफसीज के प्रभावों का अध्ययन शुरू किया। उन्होंने पता लगाया कि सीएफसी अब इतने टिकाऊ हैं कि जब तक स्ट्रेटोफेयर (समतापमंडल) के मध्य में चले नहीं जाते जहां वे अंततः (दो उभय सीएफसीज के लिए औसतन 50–100 वर्षों के बाद) क्लोरीन परमाणु को छोड़ने वाले पराबैंगनी विकिरण से विखंडित नहीं हो जाते, वातावरण में बने रहेंगे। रोलैंड और मोलिना ने तब प्रस्तावना दी कि संभव है कि क्लोरीन के यही परमाणु समतापमंडल में ढेर सारे ओजोन (ओ 3) का विखंडन करते हों।

इस खोज का पर्यावरणीय महत्व यह रहा कि चूंकि समतापमंडलीय ओजोन ग्रह की सतह तक पहुंचने वाले अधिकांश पराबैंगनी–बी विकिरण को सोख लेता है, सीएफसीज द्वारा ओजोन परत का क्षरण सतह पर यूवी–बी विकिरण को बढ़ा देगा। इसके परिणामस्वरूप त्वचा कैंसर तथा फसलों को नुकसान और समुद्री फाइटोंप्लांकटन जैसे अन्य प्रभावों में वृद्धि होगी।

1976 में अमरीका की राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी (एनएएस) ने एक रिपोर्ट जारी की जिसमें ओजोन क्षरण की परिकल्पना की वैज्ञानिक विश्वसनीयता की पुष्टि की गयी थी।

समझौते के प्रावधानों में विभिन्न पक्षों से यह अपेक्षा की गयी है कि वे अपने भावी निर्णय विश्वव्यापी विशेषज्ञों के समूहों द्वारा आंकलित मौजूदा वैज्ञानिक, पर्यावरणीय तकनीकी और आर्थिक सूचना के आधार पर ही लेंगे। निर्णय लेने की इस प्रक्रिया में इनपुट (आदाय) देने के लिए इन विषयों पर ज्ञान की प्रगति का आंकलन 1989, 1991, 1994 और 2002 में ओजोन क्षरण का वैज्ञानिक आकलन शीर्षक से रिपोर्टों की एक श्रृंखला में किया गया था।

तीसरी दुनिया

मॉन्ट्रियल समझौते के कार्यान्वयन हेतु गठित बहुपक्षीय कोष विकासशील देशों को ओजोन क्षरण करने वाले पदार्थों (ओडीएस) के उत्पादन को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करने के लिए धन मुहैया करायेगा। ओडीएस का उपयोग रेफ्रीजरेशन, फोम उत्पादन, औद्योगिक सफाई, अग्नि सुरक्षा और धूमीकरण के लिए किया जाता है।

यह बहुपक्षीय कोष किसी भी अंतर्राष्ट्रीय समझौते के तहत बनी पहली वित्तीय व्यवस्था है। इसमें 1992 में हुए पर्यावरण एवं विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में तय हुए सिद्धान्त समाहित हैं, जिसके अनुसार देशों की यह साझा और विभेदीकृत जिम्मेदारी है कि वे विश्व की साझी समस्याओं के संरक्षण और प्रबंधन के लिए काम करें।

कोष का प्रबंधन एक अधिशासी समिति करती है। विभिन्न पक्षों द्वारा अपने योगदान का 20 प्रतिशत अंश पात्र परियोजनाओं और गतिविधियों के रूप में अपनी द्विपक्षीय एजेंसियों के माध्यम से भी किया जा सकता है।

इस समय 189 देश मॉन्ट्रियल समझौते के पक्षधर (सदस्य) हैं। मार्च 2005 तक जो 6 देश सदस्य नहीं बने हैं, वे हैं–एन्डोरा, एक्वेटोरियल गिनी, इराक, सैम मैरिनो, ईस्ट तिमोर और वैटिकन सिटी।

असर की बातें

मॉन्ट्रियल समझौता जब से प्रभाव में आया है, क्लोरोफ्लोरोकार्बन और संबंधित क्लोरीनीकृत हाइड्रोकार्बन का सबसे असरदार वातावरणीय जमाव या तो जहां था वहीं ठहर गया है या फिर कम हो गया है। हैलोन का जमाव (संकेन्द्रण) हालांकि बढ़ा है, क्योंकि अभी अग्निशमन उपकरणों में भंडारित हैलोन को आग बुझाने के लिए छोड़ा जाता है, परन्तु उसकी वृद्धि दर में कमी आयी है। आशा है वर्ष 2020 तक उसकी प्रचुरता में कमी आने लगेगी।

दुर्भाग्य की बात है कि हाइड्रोक्लोरोफ्लोरोकार्बन अथवा एचसीएफसीज और हाइड्रोप्लोरोकार्बन्स अथवा एचएफसीज के बारे में कहा जा रहा है कि वे मानव विज्ञानी वैश्विक उष्मा को बढ़ाने में योगदान दे रहे हैं। एक–एक अणु के आधार पर गणना करके देखें तो ये यौगिक कार्बन डाईआक्साइड की तुलना में 10 हजार गुना अधिक खतरनाक ग्रीन हाउस गैसें हैं। इनके बढ़ते हुए उपयोग से स्पष्ट है कि मानव गतिविधियां जलवायु परिवर्तन को बदल कर रख देंगी। मॉन्ट्रियल समझौते का आह्वान है कि धीरे–धीरे करके वर्ष 2030 तक एचसीएफसीज को पूरी तरह समाप्त कर दिया जाये। परन्तु इसके लिए एचसीएफस पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाया गया है। **(पूसका)**

कुरुक्षेत्र मंगाने का पता

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड-4, तल-7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	550 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	750 रुपये (वार्षिक)

गुणों की खान है टमाटर

जगनारायण

टमाटर अपनी गुणकारी उपयोगिताओं के कारण पूरे विश्व में आलू के बाद सब्जी के रूप में सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है। यद्यपि हमारे देश में आज भी इसे सब्जी का ही स्थान प्राप्त है, लेकिन संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय ने वनस्पतिशास्त्रियों की अनुशंसा पर इसे फल के रूप में मान्यता प्रदान की है। सोलोनेसी परिवार की इस उपयोगी शाकीय फल का वानस्पतिक नाम लाइकोपोर्सिकांस स्कोलेंटम है।

टमाटर में पाये जाने वाले उपयोगी तत्वों के कारण इसका प्रयोग सभी वर्गों के लिए लाभकारी है। टमाटर में पाये जाने वाले उपयोगी खनिज एवं पोषकीय तत्वों की उपस्थिति के कारण जहां इसका नियमित प्रयोग करने वालों पर कई तरह के रोगों का प्रकोप नहीं होता वहीं कई तरह के रोगों का प्रकोप हो जाने के बाद टमाटर का औषधीय और पथ्य के रूप में प्रयोग कर रोगों का उपचार भी किया जाता है।

टमाटर में पाये वाले उपयोगी तत्वः टमाटर में विटामिन 'ए' और 'सी' प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। टमाटर में कई प्रकार के एंटीऑक्सीडेन्ट तत्व पाये जाते हैं। टमाटर में पर्याप्त मात्रा में पाया जाने वाला लाइकोपिन नामक एंटीऑक्सीडेन्ट तत्व पाया जाता है जो विटामिन 'सी' की तुलना में बहुत अधिक असरकारी होता है। लाइकोपिन शरीर में प्रतिरोधक प्रणाली को उत्तेजित कर देता है जिससे कई तरह की खतरनाक बीमारियों के पैदा होने की स्थिति ही नहीं बन पाती। अमेरिकी कृषि वैज्ञानिकों ने जीनों के हेर–फेर से टमाटर की एक ऐसी प्रजाति का विकास किया है जिसमें कैंसर पैदा करने वाले कारकों के प्रतिरोधी लाइकोपिन की उपस्थिति बहुत अधिक पायी गई है। इस टमाटर के प्रयोग से कैंसर के अवरोध और उपचार में आसानी हो गई है।

टमाटर में प्रचुर मात्रा में पाये जाने वाले लाइकोपिन की उपस्थिति के कारण इसे पौरुष ग्रन्थि में होने वाले खतरनाक श्रेणी के कैंसर का रोधी माना जाता रहा है। लेकिन ताजा वैज्ञानिक खोजों से यह पता चला है कि टमाटर में पाया गया लाइकोपिन हृदय रोगों की संभावना को भी कम कर देता है। टमाटर के पके लाल फल में 'पी'–3 नामक एक यौगिक तत्व पाया जाता है, जो खून का थक्का जमने की प्रक्रिया को कम कर देता है।

इजराइल में कार्यरत चिकित्सा वैज्ञानिक इस्थर पारन ने अपनी ताजा खोजों के आधार पर यह प्रमाणित किया है कि टमाटर को रंगीन बनाने वाले तत्व शरीर में रक्त दाब को कम करने में समर्थ होते हैं।

टमाटर में लालिमा पैदा करने वाले तत्वों पर शोध के दौरान प्रोफेसर पारन ने यह भी पाया कि टमाटर में पाये जाने वाला लाल रंग सेक्स के प्रति उदासीन रहने वाले लोगों में सेक्स सक्रियता उत्पन्न कर देता है, जिसके चलते कई लोगों की बरबाद होती पारिवारिक जिन्दगी में फिर से बहार आ जाती है और बढ़ती हुई उम्र के लोगों में पौरुष ग्रन्थि की शिकायत में कमी आती है।

टमाटर में पाये जाने वाले स्वास्थ्यकारक खट्टापन और फोलिक एसिड गर्भस्थ शिशुओं के विकास में अत्यंत उपयोगी है। यह गर्भस्थ शिशु में आने वाली शारीरिक विकृतियों को रोक देता है। गर्भ में पल रहे शिशु के रीढ़ की हड्डी के विकासक्रम की पूर्व क्रिया में न्यूरल ट्यूब का निर्माण होता है। न्यूरल ट्यूब के निर्माण प्रक्रिया में आने वाले किसी भी अवरोध के कारण जन्म लेने वाले बच्चे में मानसिक और शारीरिक विकलांगता की सम्भावना बढ़ जाती है। शोध प्रक्रियाओं से यह प्रमाणित हो चुका है कि न्यूरल ट्यूब निर्माण में भूमिका होने के कारण गर्भस्थ शिशु को शारीरिक विकृतियों से बचाने में टमाटर में पाये जाने वाले फोलिक एसिड की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

गुणों की खान टमाटर

टमाटर के हरे पत्ते और पौधे में कीटाणु एवं मच्छररोधी गुण पाये जाते हैं। अमेरिका स्थित नार्थ कैरोलीना विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने अपने शोध में पाया कि टमाटर की पत्तियों में आई.बी.आई. 243 नामक एक ऐसा गुणकारी तत्व पाया जाता है जिसके प्रभाव से मच्छर और काकरोच भाग जाते हैं। इस खोज से मच्छर भगाने में प्रयोग होने वाले हानिप्रद रसायनों से निजात मिलने की पूरी संभावना हो गई है।

टमाटर का प्रयोगः टमाटर से

सब्जी एवं सूप बनता है। इसे कच्चे सलाद में खाया जाता है, इसकी चटनी, सॉस तथा सिरका बनता है। इसका जूस भी प्रयोग किया जाता है, इसे दाल में भी डालकर खाते हैं।

टमाटर का पौधा

स्वास्थ्य संरक्षण में टमाटरः टमाटर में उपस्थित विभिन्न उपयोगी तत्वों के कारण टमाटर का नियमित सेवन शरीर में कई तरह की बीमारियों और विकृतियों की सम्भावनाओं पर रोक लगा देता है। अतः टमाटर का सेवन रोगों से रक्षा कवच का काम करता है। जर्मनी के काल्सरुहे स्थित खाद्य अनुसंधान संस्थान के पोषण संकाय प्रमुख प्रोफेसर जेरहार्ड रिचकेमर ने अपने लम्बे शोध से सिद्ध किया कि नियमित टमाटर का दो गिलास जूस लेने से शरीर की प्रतिरक्षण क्षमता बढ़ जाती है, जिससे शरीर में स्थित खून, चर्बी तथा महत्वपूर्ण और संवेदनशील अंगों पर विषाणुओं के हमले कम से कम प्रभाव डाल पाते हैं। टमाटर में पाये जाने वाले विटामिन 'ए' और 'सी' की उपस्थिति के कारण इसके नियमित सेवन से सर्दी, जुकाम, स्कर्वी, रक्तस्राव और दंतरोगों से बचा जा सकता है। टमाटर में कैल्शियम की अधिकता होती है, इसके नियमित सेवन से जहां अस्थि रोगों की सम्भावना कम हो जाती है, वहीं आज के भागमभाग वाले जीवन में दुर्घटनाओं की दशा में हड्डी के मजबूत और लचीला होने के कारण फ्रैक्चर की संभावना भी कम होती जाती है। भोजन करने से पूर्व नियमित पके लाल टमाटर खाने या इसका सूप पीने से भोजन अतिशीघ्र पच जाता है। रोजाना एक टमाटर खाने से पुरुषों में शीघ्र पतन और महिलाओं में ल्यूकोरिया, स्तन शिथिलता जैसी बीमारियां नहीं होती, जिससे महिलाओं में वृद्धावस्था का प्रभाव कम हो जाता है। नियमित टमाटर के सेवन से पौरुष ग्रंथि के कैंसर की संभावना बहुत कम हो जाती है। आधुनिक अमेरिकी शोधों से यह भी पता चला है कि टमाटर हृदय रोगों की संभावना को कम कर देता है। टमाटर का नियमित सेवन एनीमिया से बचाव करता है। नियमित टमाटर का सेवन जहां नेत्र ज्योति को बढ़ाता है वहीं नेत्र रोगों की संभावना को भी कम कर देता है। टमाटर बुढ़ापे को रोकता है। यदि गर्भवती महिलायें 200 ग्राम टमाटर नियमित सेवन करती हैं तो होने वाले बच्चे की मानसिक और शारीरिक विकलांगता की संभावना कम हो जाती है। टमाटर का सूप लेने के बाद भोजन करने से पाचन तंत्र सक्रिय रहता है जिससे कब्जियत की संभावना कम हो जाती है।

रोगोपचार में टमाटर की भूमिकाः विशिष्ट पोषकीय एवं स्वास्थ्य संरक्षक तत्वों से युक्त टमाटर कई तरह के रोगों के निवारण में भी सक्षम है, जिसके विवरण निम्नवत् हैं–

- टमाटर के सेवन से गुर्दे सक्रिय हो जाते हैं। अतः गुर्दे के काम की रुकावट में टमाटर दवा का काम करता है।
- मधुमेह के रोगी के लिए टमाटर औषधि है। नियमित टमाटर खाने से पेशाब में शक्कर का आना क्रमशः कम होता जाता है।

टमाटर में पाये जाने वाले फोलिक एसिड, फॉस्फोरिक एसिड और साइट्रिक एसिड कृमिनाशक होते हैं। अतः कृमि की शिकायत वाले व्यक्ति के लिए टमाटर औषधि का काम करता है। प्रातः खाली पेट टमाटर का रस लेने से कृमियों का नाश हो जाता है।

- रक्त की कमी और दुर्बलता के लिए टमाटर के रस में नींबू का रस मिलाकर लेना चाहिए।
- टमाटर के रस में शहद मिलाकर पीने से दुर्बलता का नाश होता है और चेहरे की कान्ति में वृद्धि होती है।
- टमाटर का रस सुस्ती और आलस्य को दूर भगाता है।
- टमाटर के रस में बराबर मात्रा में गाजर का रस मिलाकर लेने से एनीमिया से मुक्ति मिल जाती है।
- टमाटर का सेवन वृद्धावस्था से बचाव का उपयोगी माध्यम है।
- कब्ज के रोगी को भोजन के पूर्व नियमित टमाटर का सूप लेना चाहिए।
- पैर की बिवाइयों के लिए टमाटर के रस में सम मात्रा में ग्लिसरीन मिलाकर बिवाइयों में लगाना चाहिए।
- मसूढ़ों से खून आने पर दिन में कई बार टमाटर का रस लेने से रक्त आना रुक जाता है।
- कटा टमाटर रगड़ने से चेहरे के झांई व दाग–धब्बे साफ हो जाते हैं।

वर्जनायेंः तमाम गुणों के बावजूद टमाटर के सेवन में कुछ वर्जनायें भी हैं, जिन पर ध्यान न देने पर टमाटर का सेवन हानिप्रद भी हो जाता है। अतः टमाटर के सेवन में निम्न सावधानियां अवश्य बरतनी चाहिए।

- पथरी के रोगी को टमाटर का सेवन नहीं करना चाहिए।
- टमाटर का सेवन संतुलित मात्रा में ही करना चाहिए।
- टमाटर का अत्यधिक सेवन हानि पहुंचाता है।
- काले दागों से युक्त टमाटर का सेवन घातक होता है। अतः इसका सेवन किसी भी स्थिति में नहीं करना चाहिए।
- कच्चे टमाटर का सेवन कम से कम करना चाहिए। इसका अधिक प्रयोग विषकारी होता है।

डी. 53/100, छोटी गैबी, लक्सा रोड, वाराणसी–221010, उ.प्र.

इंदिरा आवास योजना से सच हुआ सपना

ग्रामीण क्षेत्रों और ग्रामीण जनता का विकास देश की आर्थिक योजना और विकास प्रक्रिया का प्रमुख प्राथमिक विषय रहा है। जीवन में रोटी, कपड़ा के बाद आवास मनुष्य की मूल आवश्यकताओं में से एक है और ऐसी बुनियादी जरूरत है जो मानव जीवन की गुणवत्ता निर्धारित करने की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आवासहीनों को मकान उपलब्ध कराने में इंदिरा आवास योजना मंत्रालय की सब्सिडी आधारित प्रमुख योजना है। मंत्रालय की यह योजना भारत निर्माण के घटकों में से एक है। इसके अंतर्गत अगले चार वर्षों में 60 लाख मकानों को बनाए जाने पर विचार चल रहा है।

इंदिरा आवास योजना की शुरूआत 1985–86 में ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम की उपयोजना के रूप में शुरू की गई थी और 1989 में यह जवाहर रोजगार योजना (जेआरवाई) की उपयोजना बन गई। 1986 में इंदिरा आवास योजना को अंततः जेआरवाई से अलग कर दिया गया और एक स्वतंत्र योजना बना दिया गया।

इस योजना के अंतर्गत गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के ग्रामीण परिवारों तथा मुक्त बंधुआ मजदूरों को आवासीय इकाइयों के निर्माण/उन्नयन हेतु सहायता उपलब्ध कराना था परन्तु बाद में इस योजना में गैर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजातियों के गरीबों को भी शामिल किया गया।

आईएवाई की शुरूआत से लेकर अभी तक 154 लाख आवास बनाए गए हैं और इस योजना का फायदा उठाने वाले लाभार्थी देश भर में फैले हुए हैं। इस योजना की एक लाभार्थी हैं मध्य प्रदेश के इंदौर जनपद के ग्राम मुंडलानायत की अनुसूचित जाति की महिला श्रीमती बश्कर बाई जिनका मकान पहले कच्चा था, इसी वजह से बारिश के दिनों में उनके घर में पानी भर जाता था और उनके घर की छत भी टपकती थी। इसी कारण यह हमेशा चिन्तित रहती थी। किन्तु गरीबी के कारण वह अपना शौचालय सहित मकान का सपना पूरा नहीं कर पा रही थी। वह एक स्वयं सहायता समूह की सदस्या भी थी। उन्होंने अपनी समस्या सहायक विकास अधिकारी को बताई तो उसने उन्हें इंदिरा आवास योजना के बारे में बताया तथा ग्राम पंचायत के सचिव के माध्यम से उन्हें वर्ष 2005–06 के दौरान नवीन आवास निर्माण हेतु 25000 रुपए की राशि को स्वीकृति मिल गई तथा उनके अपने प्रयासों और इंदिरा आवास योजना की सहायता से अब उनका अपना मकान है। श्रीमती बश्कर बाई इंदिरा आवास योजना की प्रशंसा करते हुए कहती हैं कि हम जैसे गरीबों को छत देने की बहुत अच्छी एवं अनूठी योजना है। इस योजना का लाभ मेरे जैसे हर गरीब को मिलना चाहिए।

इसी गांव के खेतिहर मजदूर श्री बने सिंह का अपना घर तो था परंतु उसकी हालत जीर्ण–शीर्ण थी। घर में शौचालय एवं धुआं रहित चूल्हा भी नहीं था। अपने घर की हालत को सुधारने और शौचालय और चूल्हे का निर्माण करने की आशा में उन्होंने ग्राम पंचायत कार्यालय से सम्पर्क किया। वर्ष 2005–06 में उन्हें आवास निर्माण हेतु 25000 रुपये मिले जिससे उन्होंने नए आवास के निर्माण के साथ शौचालय और धुआं रहित चूल्हे का भी निर्माण किया। इस प्रकार इंदिरा आवास योजना ने उनके सपने को सच कर दिया।

इसी प्रकार रोजी–रोटी की तलाश में पूर्व धार जिले से इंदौर जिले के कनाडिया गांव में आकर बसने वाली श्रीमती मनी बाई और उसके पति दिन भर कड़ी मेहनत कर दिन का समय तो निकाल देते परंतु रात को सिर छुपाने के लिए उनके पास कोई जगह नहीं थी, जहां वे अपने पांच छोटे–छोटे बच्चों के साथ रात गुजार सके। इंदिरा आवास योजना के बारे में सुनकर यह गांव के सरपंच के पास गए। सरपंच महोदय ने उन्हें इंदिरा आवास योजना में घर दिलाने का आश्वासन दिया। जनप्रतिनिधियों और जिला पंचायत के मैदानी स्तर के अधिकारी के सहयोग के शीघ्र ही उन्हें आईएवाई के अंतर्गत कुटीर निर्माण के लिए राशि मिल गई। आज अपने घर के निर्माण के बाद परिवार का मुखिया श्री घनश्याम बहुत ही खुश है और उन्हें अपना बसेरा दिलाने के लिए शासन को बार–बार धन्यवाद देते हैं।

इंदौर जिले के ही ग्राम रंगवासा की निवासी पेपू बाई का विवाह नागदा के खेतीहर मजदूर से हुआ था। मानसिक रूप से कमजोर बेटी को जन्म देने के फलस्वरूप उनके पति ने उन्हें छोड़ दिया। ऐसे में वह अपनी विधवा बूढ़ी और अंधी मां के पास रंगवासा गांव में अपनी बेटी को लेकर आ गई। मुसीबत की इस घड़ी में उनके भाई ने भी उनका साथ नहीं दिया और उन्हें अपनी मां का घर भी छोड़ना पड़ा। अपनी जमा पूंजी से ही उन्होंने रंगवासा में एक छोटी सी झोंपड़ी बनाई जो एक दिन तेज

आंधी–तूफान में टूट गई और इसके साथ ही उनके जीवन की आखिरी आस भी।

उनकी दयनीय स्थिति को देखकर गांव वालों ने उसे शासन की इंदिरा आवास योजना की जानकारी दी। इस योजना के बारे में सुनकर उनके लिए उम्मीद की एक किरण जागी। उन्होंने आईएवाई के अंतर्गत घर बनाने के लिए आवेदन प्रस्तुत किया। उनके आवेदन पर विचार कर इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत शीघ्र ही उनकी कुटीर का निर्माण शुरू हुआ। अब अपनी कुटीर पाकर पेपू बाई की आंखों में दुख के आसूं थम गए हैं और चेहरे पर अपने घर पाने की मुस्कान है।

ऐसे ही अनेक उदाहरणों को देखकर लगता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में आवासों की कमी और आवासों की जरूरतों को पूरा करने में इंदिरा आवास योजना महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। इस योजना का उद्देश्य देश की ग्रामीण आधारभूत सुविधाओं को बढ़ाना है, जिसके लिए वर्ष 2006–07 में 2920 करोड़ रुपए का परिव्यय अनुमोदित किया गया है। **(पसूका)**

आत्मनिर्भरता का आगाज़

भारत सरकार के खादी और ग्रामोद्योग आयोग ने पिछले पांच दशकों में अनेक ऐसे प्रयास किए हैं जिनकी वजह के पिछड़े गांवों में बसे गरीब परिवार रोजगार की राह पर चल पड़े हैं। आत्मनिर्भरता का आगाज़ करने वाले ऐसे दो गांव आगारिया और सूरी देश का गौरव बनेंगे।

झालावाड़ जिले (राजस्थान) की बकानी पंचायत समिति के ये गांव संपूर्ण रोजगार से जुड़े गांव घोषित किए गए हैं। खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग के मुख्य कार्यकारी अधिकारी सी.चन्द्रन, के अनुसार आयोग के गोल्डन जुबली समारोह तथा भारत निर्माण अभियान की श्रृंखला के तहत इन दो गांवों को गोद लिया गया है।

आर्थिक आजादी का जयघोष करने की मिसाल बनने वाले इन दो गांवों को सड़क, पानी, स्वच्छता, स्वास्थ्य, घर और शिक्षा की मूलभूत सुविधाओं से जोड़ना इस कार्यक्रम की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। "यह एक ऐतिहासिक क्षण है" – सी. चन्द्रन का ऐसा मानना है।

झालावाड़ में 20 मार्च को आयोजित एक समारोह में खादी ग्रामोद्योग आयोग की अध्यक्षा तथा आंध्र प्रदेश की पूर्व राज्यपाल सुश्री कुमुद बेन जोशी ने इन गांवों को संपूर्ण रोजगार से जुड़े गांव घोषित किया। उल्लेखनीय है कि भारत सरकार के कोटा स्थित पत्र सूचना कार्यालय ने खानपुर (झालावाड़) में आयोजित भारत निर्माण अभियान के दौरान इस सफलता को सबके सामने रखा था।

इस कार्यक्रम में सहयोगी बनी समिति विनोबा सेवा समिति के अनुसार सूरी के 18 तथा आगरिया के 45 परिवारों को चरखे तथा सूरी के 21 व आगरिया के 23 परिवारों को पैडललूम दिए गए हैं। इससे पहले सूरी और आगरिया के 28–28 परिवारों को पैडललूम दिए जा चुके हैं। इस तरह इन दोनों गांवों का हर परिवार रोजगार से जुड़कर आत्मनिर्भर बन गया है।

इन परिवारों को अब जनश्री बीमा योजना का लाभ भी मिलेगा। भारत सरकार की इस योजना के तहत दसवीं पंचवर्षीय योजना अवधि के दौरान लगभग 3 लाख 90 हजार कारीगरों को कवर किया जाना है। इस योजना के अन्तर्गत बीमाकृत कारीगर के 9वीं से 12वीं कक्षा के बीच स्कूल जाने वाले दो छात्र या छात्राओं को प्रतिमाह सौ रुपए छात्रवृत्ति भी मिलेगी।

रोजगार पाने वाले सभी परिवारों को बिजली से जोड़ने, शौचालय व स्वच्छ पानी की उपलब्धता के साथ–साथ सभी परिवारों का तीस–तीस हजार का मेडीक्लेम बीमा भी कराया गया है।

इस कार्य से जुड़ी स्वयं सेवी संस्था विनोबा सेवा समिति के अनुसार प्रत्येक कामगार को स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की झालावाड़ शाखा द्वारा मकानों हेतु कम ब्याज पर ऋण भी दिया जा रहा है। इसके अलावा इन कामगारों को कामगार कल्याण से जोड़ने, इनके स्वयं सहायता समूह बनाकर उन्हें आर्थिक रूप से मजबूत करने जैसे प्रयास भी इस कार्यक्रम का अहम हिस्सा हैं।

भारत सरकार के सपने को साकार करने वाले ये दो गांव दूसरों के लिए भी प्रेरणा बनते जा रहे हैं। समिति के अनुसार राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का चरखा चर्चा का विषय तो बना ही है पर वो ऐसी चेतना का वाहक भी बन रहा है जिसकी गूंज हर गांव, हर घर में गूंजने लगेगी।

RAU'S IAS

A name that Nation trusts

Amazing Success

Our Last Exam Results : Nine positions secured by our students in first 20 and 49 in first 100 with overall 203 total selections. As regards the past achievements, Study Circle has contributed nearly one-third of the total selections done for Civil Services by UPSC since 1953.

It is a well known fact that Rau's is the most trusted and recommended name all over the country for IAS & PCS coaching.

Unbeatable Strategy

Answers that matter : The most crucial fact about coaching is that it should improve the quality of your answers in the minimum possible time. It is precisely this training on which we focus on at Rau's to give an extra edge to the answers you give / write in the Civil Services Examination.

Be Sure

We have no branches or associates any where in India except Jaipur. Our name which has become a legend among students for the highest standards in teaching, and hence has been copied by a lot of people across India, but no one can match our quality.

Programme Highlights

Civil Services/PCS Exam - 2008

- Personal Guidance (English Medium) is available for -
  General Studies/ Essay, History, Sociology, Public Administration, Geography, Psychology, Law & Commerce.
- पर्सनल गाइडेंस (हिन्दी माध्यम) -
  सामान्य अध्ययन / निबंध, इतिहास, समाजशास्त्र भूगोल एवं लोक प्रशासन में उपलब्ध।

  Postal Guidance in English Medium available for -
  General Studies, History, Sociology, Public Administration and Geography.
- पोस्टल गाइडेंस (हिन्दी माध्यम) -
  केवल सामान्य अध्ययन, भारतीय इतिहास एवं भूगोल में उपलब्ध।
- Hostel facility arranged.

कोई भी लक्ष्य बड़ा नहीं ।
जीता वही जो डरा नहीं ।।

If you are taught by the stars, sky is the limit.

New batches for 2008 Exam, start from 1st June, 2007

Admission Open, Apply Now.

Contact personally or write for prospectus with a DD/MO of Rs. 50/- favouring

RAU'S IAS STUDY CIRCLE

Head Office : 309, Kanchanjunga Bldg., 18, Barakhamba Road, Connaught Place, New Delhi-110001
Phone : 011-23317293, 23318135-36, 23738906-07, 32448880-81, 65391202, Fax: 23317153

Jaipur Centre : 701, Apex Mall, Lal Kothi, Tonk Road, Jaipur - 302015, Ph.: 0141-6450676, 3226167, 9351528027

For full details on fast-track log-on our website: www.rauias.com

The Original Rau's - Since 1953

KH-06/07/01

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)-05/3164/2006-08
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)-55/2006-08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2006-08
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : प्रभारी संपादक : कैलाश चन्द मीना